योगविद्या

वर्ष 15 अंक 4
अप्रैल 2026

बिहार योग विद्यालय, मुंगेर, बिहार, भारत

हरिः ॐ

योगविद्या का सम्पादन, मुद्रण और प्रकाशन स्वामी सत्यानन्द सरस्वती के संन्यासी शिष्यों द्वारा स्वास्थ्य लाभ, आनन्द और प्रकाश प्राप्ति के इच्छुक व्यक्तियों के लिए किया जाता है। इसमें बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान के क्रियाकलापों की जानकारियाँ प्रकाशित की जाती हैं।

सम्पादक – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

योगविद्या मासिक पत्रिका है।

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर, 811201, बिहार, द्वारा प्रकाशित।

© Bihar School of Yoga 2026

उपयोगी संसाधन

वेबसाइट :
www.biharyoga.net
www.sannyasapeeth.net
www.satyamyogaprasad.net

एप्प : (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)
Bihar Yoga
APMB
YOGA (अंग्रेजी पत्रिका)
YOGAVIDYA (हिन्दी पत्रिका)
FFH (For Frontline Heroes)

कुल पृष्ठ संख्या : 56 *(कवर पृष्ठों सहित)*

कवर एवं प्लेट : भारत योग यात्रा, 2026

आध्यात्मिक मार्गदर्शन

मानसिक संतुलन

मानसिक संतुलन एक उन्नत योगी का प्रमुख गुण एवं लक्षण है। जो व्यक्ति हर समय मानसिक संतुलन बनाए रख सकता है, वह वास्तव में एक स्थिर और सुखी व्यक्ति है, एक सच्चा योगी है।

संतुलित मन वाला व्यक्ति दुःख के समय विचलित नहीं होता और सुख में सम रहता है। उसकी मानसिक अवस्था स्थिर होती है। वह आसक्तियों से दूर रहता है, उसे न किसी चीज से राग होता है और न ही किसी चीज से द्वेष। उसके अंदर मानसिक दृढ़ता और आतंरिक शांति बनी रहती है।

– श्री स्वामी शिवानन्द सरस्वती

बिहार योग विद्यालय, गंगादर्शन, फोर्ट, मुंगेर–811201, बिहार के लिए स्वामी शिवध्यानम् सरस्वती द्वारा प्रकाशित

स्वामित्व – बिहार योग विद्यालय **सम्पादक** – स्वामी ज्ञानसिद्धि सरस्वती

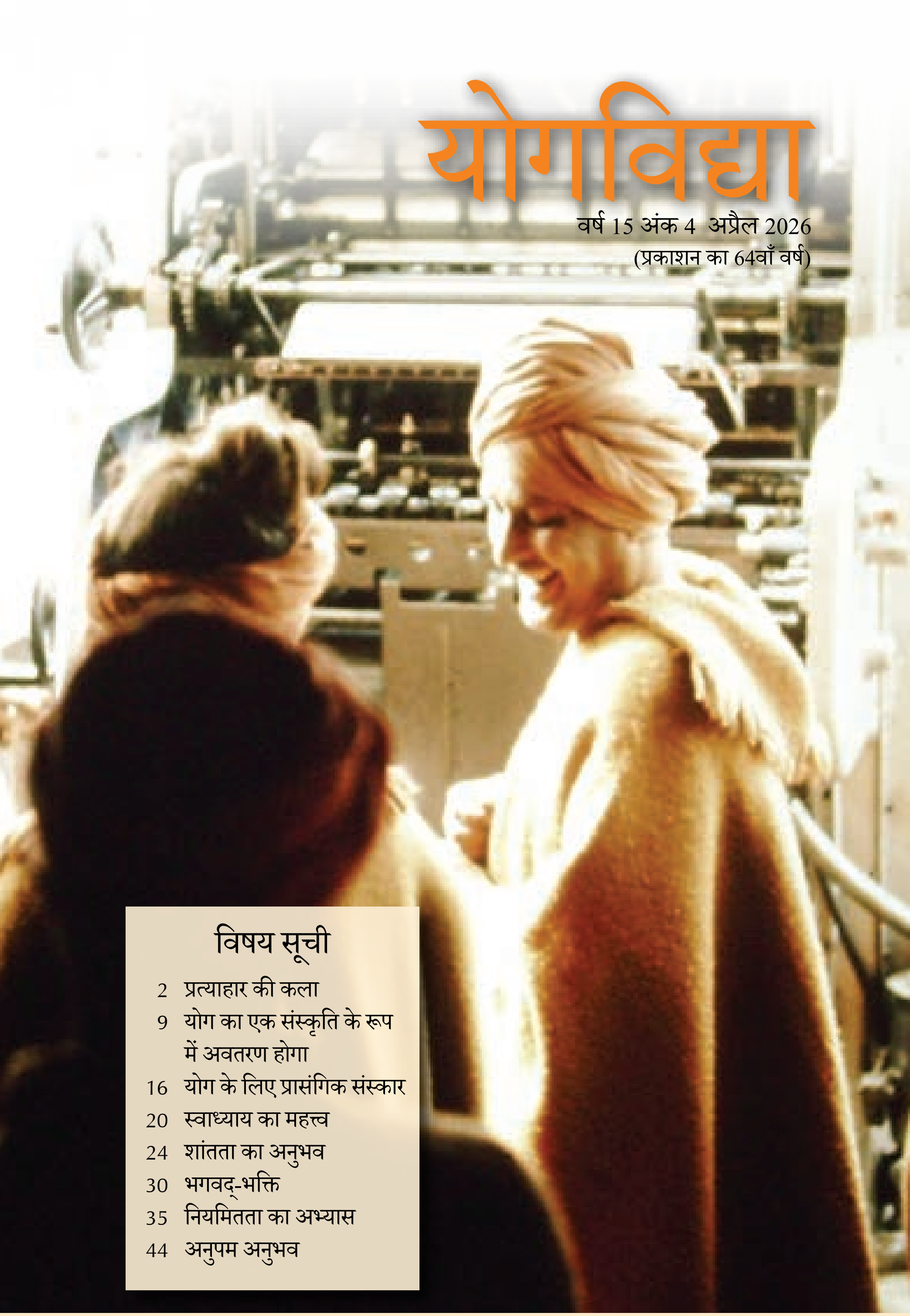

योगविद्या

वर्ष 15 अंक 4 अप्रैल 2026
(प्रकाशन का 64वाँ वर्ष)

विषय सूची

2 प्रत्याहार की कला
9 योग का एक संस्कृति के रूप में अवतरण होगा
16 योग के लिए प्रासंगिक संस्कार
20 स्वाध्याय का महत्त्व
24 शांतता का अनुभव
30 भगवद्-भक्ति
35 नियमितता का अभ्यास
44 अनुपम अनुभव

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः। कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन॥

प्रत्याहार की कला

स्वामी शिवानन्द सरस्वती

श्रीमद् भगवद् गीता में भगवान श्रीकृष्ण प्रत्याहार के बारे में संकेत देते हुए कहते हैं –

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गानीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता॥2.58॥

अर्थात् जैसे कछुआ सब ओर से अपने अंगों को समेट लेता है, वैसे ही जब मनुष्य इन्द्रिय-विषयों से इन्द्रियों को सब प्रकार से हटा लेता है, तब उसकी बुद्धि स्थिर हो जाती है।

इन्द्रियाँ इच्छाओं का स्थूल रूप हैं। देखने की इच्छा ही वास्तविक नेत्र है, सुनने की इच्छा ही वास्तविक कान। स्थिर और गत्यात्मक, इन्द्रियों की ये दो अवस्थाएँ होती हैं। जब कोई इच्छा सक्रिय होने लगती है, तब इन्द्रियाँ क्रियाशील हो जाती हैं। यह गत्यात्मक अवस्था है। ज्यों ही इच्छा की पूर्ति होती है, इन्द्रियाँ सन्तुष्ट होकर वापस सिमट जाती हैं। यह स्थिर या निष्क्रिय अवस्था है।

इन्द्रियाँ मन का विस्तार मात्र हैं। जिस प्रकार नदियाँ समुद्र का सम्भरण करती हैं और उनके बिना समुद्र का अस्तित्व नहीं हो सकता, उसी प्रकार इन्द्रियाँ मन का पोषण करती हैं और उनके बिना मन के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। यदि आपने इन्द्रियों को संयमित कर लिया तो समझिए कि मन नियन्त्रित हो गया। इन्द्रियाँ और मन एक ही हैं।

मन इन्द्रियों का संगठित समूह है। यह इन्द्रियों से उच्चतर शक्ति है। जिस प्रकार मंत्री राजा की आज्ञा का पालन करता है, उसी प्रकार पाँचों ज्ञानेन्द्रियाँ मन के निर्देशानुसार कार्य करती हैं। मन में उत्पन्न भोजन करने की इच्छा अभिव्यक्त होती है जीभ, दाँत एवं उदर के माध्यम से। मन की घूमने-टहलने की इच्छा पैरों के माध्यम से प्रकट होती है। यदि आप मन को नियन्त्रित कर लें तो आप सभी इन्द्रियों को नियन्त्रित करने में सक्षम हो जाएँगे।

प्रत्याहार

मन मुख्य सेनापति है और इन्द्रियाँ उसके सैनिक। मन के सहयोग के बिना वे कुछ भी नहीं कर सकतीं। यदि आप मन को इन्द्रियों से अलग कर लें तो अपने आप इन्द्रियों का प्रत्याहार हो जाएगा। जब आप किसी रोचक पत्रिका को पढ़ने में तल्लीन होते हैं तब आप अपने मित्र की बुलाने की आवाज को भी नहीं सुनते। आप यह नहीं जानते कि घण्टाघर की घड़ी ने पाँच बजा दिए हैं। ऐसा प्रत्येक व्यक्ति का अनुभव है। उस समय मन कहीं दूर होता है, तब वह श्रवण-इन्द्रिय से सम्बद्ध नहीं होता। इसी तरह, आँखें खुली रहने के बावजूद यदि मन अन्यत्र विचरण कर रहा हो तो आप अपने सामने की वस्तु को भी नहीं देख सकेंगे।

प्रत्याहार का तात्पर्य इन्द्रिय-विषयों से इन्द्रियों के निवर्तन से है। प्रत्याहार इन्द्रियों की बहिर्गामी प्रवृत्तियों पर रोक लगाता है। तब इन्द्रियाँ मन में अन्तर्निहित होने लगती हैं। जब साधक प्रत्याहार में अच्छी तरह स्थित हो जाता है तब इन्द्रियाँ पूर्णतः संयमित हो जाती हैं।

प्रत्याहार के अभ्यास में मन और इन्द्रियों, दोनों को नियन्त्रित करना होता है। जब इन्द्रियाँ विषय-वस्तुओं का त्याग कर देती हैं, तब वे मनोसामग्री का रूप ले लेती हैं और मन में समाहित हो जाती हैं। यही प्रत्याहार है। जब इन्द्रियों को उनके विषयों से निवर्तित किया जाता है तो उसे इन्द्रिय-प्रत्याहार कहा जाता है। जब मन इन्द्रियों से अलग हो जाता है तो यह मनोप्रत्याहार कहलाता है।

प्रत्याहार की विधियाँ

जब आँखें सुन्दर वस्तुओं की ओर भागती हैं तब उन्हें निवर्तित करके श्रीकृष्ण के चरण-कमलों में लगाइए। जब कान सांसारिक ध्वनियों और धुनों की ओर भागें तब उन्हें 'नारायण' नाम सुनने का प्रशिक्षण दीजिए। गन्ध, स्वाद एवं स्पर्श से निवर्तन हेतु तो आपको अपने मन को ही नियन्त्रित करना होगा। आप चीनी, नमक, मिर्च, स्वादिष्ट भोजन, सुगन्धित द्रव्य एवं कोमल शय्या का अवश्यमेव त्याग करें।

इन्द्रिय-अनुशासन एक अति महत्त्वपूर्ण विषय है। प्रत्येक इन्द्रिय का सावधानीपूर्वक अवलोकन करें और उपवास, मौनपालन, त्राटक, ब्रह्मचर्य, इन्द्रिय-विषयों के त्याग, आत्मसंयम तथा प्रत्याहार जैसे सशक्त उपायों द्वारा उसे नियन्त्रित करें। इन्द्रियों के नियन्त्रण का तात्पर्य मनोनियन्त्रण से है। मन के प्रत्यक्ष सहयोग के बिना इन्द्रियाँ स्वतन्त्र रूप से कुछ भी नहीं कर सकतीं। ब्रह्मचर्य जननेन्द्रिय को नियन्त्रित करता है। मौनपालन वाणी-तन्त्र को तथा त्राटक का अभ्यास नेत्रों को नियन्त्रित करता है।

जब आप सड़क पर चल रहे हों तो बन्दर की तरह इधर-उधर न देखें। अपने पैरों पर दृष्टि रखें तथा आगे बढ़ते जाएँ। जब आप घर पर होते हैं तो त्राटक को अभ्यास करें। अपने नेत्रों को सदा एक बिन्दु पर एकाग्र करें। यह अभ्यास नेत्रों के नियन्त्रण में सहायक होगा। सिनेमाघरों और नाचघरों में न जाएँ। वैसे स्थानों में भी न जाएँ जहाँ अश्लील गायन और आमोद-प्रमोद होता हो। मोटी, खुरदुरी चटाई पर सोएँ। मुलायम गद्दे को हटा दें। सुगन्धित द्रव्य

का उपयोग न करें। प्रत्येक इन्द्रिय पर दृष्टि रखें और यदि किसी में जरा भी पथभ्रष्ट होने की प्रवृत्ति नजर आए तो तत्काल उसे नियन्त्रित करें। जो अपनी इन्द्रियों को अनुशासित कर लेता है वह दृढ़ इच्छाशक्ति और मानसिक शान्ति को प्राप्त कर लेता है। वह अच्छी तरह ध्यान का अभ्यास कर सकता है। वह अत्यधिक सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है। वह भौतिक जीवन के साथ-साथ आध्यात्मिक जीवन में भी सफलता प्राप्त करता है। इन्द्रिय-अनुशासन के बिना कोई भी उच्चतर साधना सम्भव नहीं।

जिस प्रकार बैलगाड़ी का चालक अपने उतावले बैलों को रोककर जुए से लगाए रखता है, उसी तरह प्रत्याहार के अभ्यास में आपको बहिर्मुखी इन्द्रियों को विषयों की ओर भागने से बार-बार रोककर मन को अपने ध्यान के बिन्दु पर केन्द्रित करना होगा। आपको अपनी इन्द्रियों को धीरे-धीरे नियन्त्रित करने की कला सीखनी होगी। कुछ साधक अपनी इन्द्रियों को बलपूर्वक नियन्त्रित करने का प्रयास करते हैं। यही कारण है कि उन्हें यदा-कदा परेशानियों का सामना करना पड़ता है। आपको एक-एक करके इन्द्रियों का निवर्तन करना चाहिए। सर्वप्रथम सबसे अशान्त इन्द्रिय पर ध्यान दीजिए और उसके प्रत्याहार का अभ्यास शुरू कीजिए। तदुपरान्त आप दूसरी इन्द्रिय को लीजिए। यदि आप सभी इन्द्रियों को एक साथ व्यवस्थित करने का प्रयास करेंगे तो सफल नहीं होंगे। यह अति कठिन कार्य होगा। आप बहुत थकावट का अनुभव करेंगे।

साधक को इन्द्रियों की प्रतिक्रिया से सावधान रहना चाहिए। यदि वह सतर्क नहीं है या अपनी साधना में नियमित नहीं है या उसके वैराग्य में कमी आ जाती है तो इन्द्रियों की प्रतिक्रिया प्रारम्भ हो जाती है तथा वे और अधिक उग्र हो जाती हैं। तब उन्हें नियन्त्रित करना कठिन हो जाता है और साधक का निराशाजनक पतन होता है।

प्रत्याहार में निपुण होने के लिए साधक को घोर प्रयास करना पड़ता है। प्रत्याहार में सफलता प्राप्त करने हेतु पूर्ण वैराग्य का होना अनिवार्य है। कुछ वर्षों के कठोर एवं अनवरत संघर्ष के बाद ही आप सफल हो सकेंगे। प्रत्याहार में सफल होने पर धारणा स्वतः होने लगती है। सामान्यतः लोग प्रत्याहार का अभ्यास किए बिना ही धारणा का अभ्यास करने लगते हैं। धारणा में उनकी असफलता का यही कारण है। प्रत्याहार अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। प्रत्याहार के अभ्यास द्वारा इन्द्रियों का पोषण समाप्त हो जाता है। वे दुबली और क्षीण हो जाती हैं। विषयों के निकट सम्पर्क में आने के बावजूद भी वे उत्तेजित नहीं होतीं। वे उन सर्पों के समान हो जाती हैं जिनके विषदन्त निकाल लिए गए हैं। अब वे कोई हानि नहीं पहुँचा सकतीं।

प्रत्याहार के अभ्यास में त्याग और वैराग्य अत्यधिक सहायक होते हैं। यदि आप स्वेच्छापूर्वक मन को इन्द्रियों से जोड़ सकें और अलग कर सकें, तो इसका तात्पर्य यह है कि आपने मन पर काफी नियन्त्रण प्राप्त कर लिया है। अब आप मन की बहिर्गामी वृत्तियों को किसी भी क्षण रोक सकते हैं। प्रत्याहार आन्तरिक आध्यात्मिक जीवन का प्रवेश द्वार है। प्रत्याहार में पूर्णता प्राप्त करने के बाद धारणा और ध्यान के अभ्यास आसानी से होने लगते हैं। जिसने प्रत्याहार में सफलता प्राप्त कर ली है वह अपने मन को बहुत लम्बे समय तक एकाग्र कर सकता है। वह कभी भी, कहीं भी, यहाँ तक कि भरे बाज़ार के शोरगुल में भी एकाग्रता का अभ्यास कर सकता है। वह ज्यों ही ध्यान के लिए बैठेगा, त्यों ही उसकी इन्द्रियाँ निवर्तित हो जाएँगी। बाह्य ध्वनियों से उसे कोई बाधा नहीं पहुँचेगी।

साधना की अवधि में लोगों से अधिक मिलना-जुलना न करें। अधिक भोजन, शयन, बात-चीत या घूमना-फिरना भी न करें। इन पाँच निषेधों का पालन करें। अधिक मिलने-जुलने से मन में अशान्ति उत्पन्न होगी। अधिक बात-चीत करने से चित्त-विक्षेप तथा अधिक घूमने-फिरने से थकावट एवं कमजोरी होगी। अधिक खाने से आलस्य और उनींदापन उत्पन्न होगा।

आपकी यात्रा तभी सुरक्षित हो सकती है जब आपके घोड़े की लगाम नियन्त्रण में हो। इन्द्रियाँ घोड़ों के समान हैं। यदि वे नियन्त्रण में हों तो मुक्ति की ओर जाने वाले मार्ग पर आपकी यात्रा सुरक्षित एवं सुगम हो जाएगी। मन की सहायता के बिना इन्द्रियाँ कुछ नहीं कर सकतीं। मन ही उनका स्वामी और अधिनायक है। इन्द्रियों के नियन्त्रण का तात्पर्य मन के नियन्त्रण से ही है। विचारों के नियन्त्रण से मन एवं इन्द्रियों का भी नियन्त्रण हो जाता है। इसलिए विचारों का नियन्त्रण अवश्य होना चाहिए। यह सब के लिए अभीष्ट है। ऐसा करने से असीम आनन्द और शाश्वत जीवन की प्राप्ति होगी।

योगाभ्यासियों को यम, नियम, आसन एवं प्राणायाम में थोड़ी सफलता प्राप्त करने के बाद ही प्रत्याहार का अभ्यास आरम्भ करना चाहिए। प्राणायाम के अभ्यास के बाद प्रत्याहार स्वतः होने लगता है। श्वसन के संयम द्वारा जब प्राण-शक्ति नियन्त्रित होने लगती है, तब इन्द्रियाँ अपने-आप क्षीण हो जाती हैं। अब अपने विषयों के सम्पर्क में आने के बाद भी वे सक्रिय नहीं होतीं।

प्रत्याहार के लाभ

प्रत्याहार एक कठिन अभ्यास अवश्य है। शुरू में इसमें मन नहीं लगता, पर बाद में यह रुचिकर हो जाता है। इस अभ्यास में सफलता हेतु पर्याप्त धैर्य एवं अध्यवसाय की आवश्यकता है। निरन्तर अभ्यास से आप दृढ इच्छा-शक्ति प्राप्त करेंगे। प्रत्याहार के अभ्यास के दौरान इन्द्रियाँ जंगली साँड़ों की तरह बार-बार अपने विषयों की ओर भागेंगी। आपको उन्हें बार-बार निवर्तित करके अपने मन को ध्यान के बिन्दु पर एकाग्र करना होगा। प्रत्याहार में अच्छी तरह स्थित योगी उस युद्ध के मैदान में भी शान्तिपूर्वक ध्यान कर सकता है जहाँ निरन्तर तोपों की गड़गड़ाहट सुनाई पड़ रही हो और चारों तरफ मार-काट मच रही हो।

सन्त तिरुवल्लुवर की पत्नी को प्रत्याहार के अभ्यास में विशिष्ट दक्षता प्राप्त थी। वे पानी से भरे हुए बर्त्तन को अपने सिर पर लेकर बड़ी भीड़ में भी घूम सकती थीं। बर्त्तन से जल का एक बून्द भी नहीं छलकता था। प्रत्याहार में निपुण साधक अपने बिस्तर पर लेटते ही क्षण-भर में गहरी निद्रा में डूब जाता है। प्रत्याहार में दक्ष होने के कारण नेपोलियन भी ऐसा कर पाता था।

शुकदेव को प्रत्याहार में आश्चर्यजनक दक्षता प्राप्त थी। एक बार राजा जनक ने अपने राजमहल में उनकी परीक्षा ली। राजा ने उनके चित्त को विक्षिप्त करने के लिए राजमहल के चारों ओर संगीत एवं नृत्य के समारोह का आयोजन

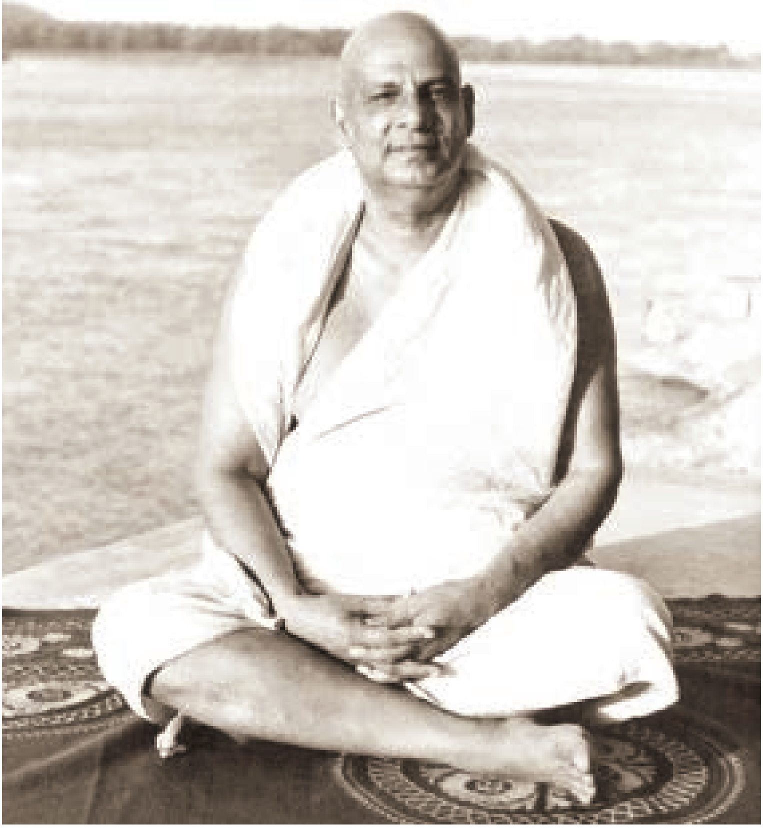

किया। तरह-तरह के मनोरंजन की व्यवस्था की गयी। शुकदेव से अनुरोध किया गया कि वे दूध से भरे प्याले को अपने हाथ में लेकर तीन बार राजमहल का चक्कर लगायें तथा इस बात का ध्यान रखें कि दूध की एक बून्द भी जमीन पर न गिरे। शुकदेव को अपने प्रयास में पूरी सफलता मिली क्योंकि वे प्रत्याहार में पूर्णतः स्थित थे। कोई भी दृश्य या ध्वनि उनके मन को विक्षिप्त न कर सकी।

प्रत्याहार में सफलता साधक के पूर्व जन्मों के संस्कारों के सामर्थ्य पर निर्भर करती है। जिसने अपने पूर्व जन्मों में यत्नपूर्वक यम, नियम, आसन, प्राणायाम एवं प्रत्याहार का कुछ हद तक अभ्यास किया है, उसे इस जीवन में कम समय में ही प्रत्याहार में सफलता मिल जाएगी। किन्तु एक नौसिखिये को, जो इस जीवन में पहली बार योगाभ्यास करने का प्रयास कर रहा है और जिसे पूर्व जन्मों के संस्कार प्राप्त नहीं हैं, प्रत्याहार में निश्चित सफलता प्राप्त करने में काफी समय लग सकता है। एक योगाभ्यासी अपनी साधना के अनुभवों और सफलता से स्वयं यह अनुमान लगा सकता है कि वह एक नौसिखिया है अथवा अनेक जन्मों से परिपक्व हुआ निपुण योगी।

योग का एक संस्कृति के रूप में अवतरण होगा

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

धनबाद के लोगों ने इस योग सम्मेलन के माध्यम से अपने लिए ही नहीं, बल्कि आने वाली सभ्यता के लिये भी एक महत्त्वपूर्ण कार्य किया है। हम योग के खोजकर्ता या आविष्कारक नहीं हैं, बल्कि उसे समझने के लिए यहाँ एकत्र हुए हैं। योग एक प्राचीन संस्कृति है। कई कारणों से हम योग का अर्थ स्पष्ट रूप से नहीं समझ पाते थे। कभी यह दुःख के रहस्यों में खो गया, तो कभी हमने इसे इतना दुरूह बना दिया कि साधारण आदमी ने इसे कभी अपने लिए नहीं समझा।

आधुनिक वैज्ञानिकों ने एक महत्त्वपूर्ण काम किया है। उन्होंने कहा कि भारत, अमेरिका और इंग्लैण्ड में लोग योग की बात करते हैं, परन्तु इसके तथ्य को नहीं जानते हैं। जो भी अनुसंधान दुनिया में हुए हैं, उनके पीछे एक ही भावना कार्य करती रही कि योग एक मान्यता है, विज्ञान नहीं। ऐसा कैसे संभव है कि दो आसन कर लिये और बड़ी-बड़ी बीमारियाँ ठीक हो गयीं, शीर्षासन कर लिया, तो शरीर की प्रकृति बदलने लगी! यदि किसी विश्वास को वैज्ञानिक आकार देना है, तो उसे एक वैज्ञानिक पृष्ठभूमि प्रदान करनी होगी। विदेशों में इस पर किये जाने वाले अनुसंधानों का उद्देश्य था – इसकी अनुपयोगिता को प्रमाणित करना, क्योंकि जब मैं विदेश दौरे पर जाता था, तो लोग तरह-तरह के प्रश्नों से मुझे परेशान करते थे। वे कहते थे, आँख बंद करके श्वास पर खयाल रखने से रक्तचाप कैसे घट जायेगा? रक्तचाप और अनिद्रा की बीमारियाँ चिकित्सा-शास्त्र के अनुसार शरीर के अंदर की विशेष परिस्थितियाँ हैं, जिन्हें विज्ञान प्रायोगिक भाषा में समझाता है और मैं कहता हूँ कि आँख बंद कर चुपचाप श्वास का खयाल करो, ठीक हो जायेगा। ऐसा कैसे संभव है, मेरे पास समझाने का साधन नहीं था।

मैं योग जानता था, मगर वैज्ञानिक पृष्ठभूमि पर लोगों को योग समझा नहीं सकता था। तब मैंने मुंगेर जिले में एक छोटे आश्रम की स्थापना की। उसके बाद दुनिया में जहाँ-जहाँ योग पर अनुसंधान हो रहे हैं, जापान से पेरिस तक

मैंने सम्पर्क स्थापित करना शुरू किया और वहाँ जो-जो शोध होते गये, उन्हें मंगवाकर एकत्र करता रहा। ये शोध विश्व की अनेक भाषाओं में हो रहे थे। उन्हें मैं हिन्दी और अंग्रेजी में अनुवाद करवा कर रखता, उनका अध्ययन करता। परिणामस्वरूप आज बड़े-बड़े चिकित्सकों की सभा में उनके प्रश्न का उत्तर उन्हीं की भाषा में दे सकता हूँ। सहज श्वास पर ध्यान के साथ नाड़ीशोधन प्राणायाम करने से रक्तचाप क्यों सामान्य हो जाता है, यह वैज्ञानिक आधार पर समझा सकता हूँ।

मैंने हमेशा कहा है कि हम ऐसी संस्कृति के वारिस हैं, जो अपने आप में पूर्ण है। समाज मनुष्य के मस्तिष्क की अभिव्यक्ति है, उसकी अंतर्चेतना की अभिव्यक्ति है; यह अंतर्चेतना मन से परे होती है। मनुष्य चैतन्य है, उसमें निरंतर विचार उत्पन्न होते रहते हैं। योग में 'समन्वय की स्थिति' एक रहस्य के समान होती है। जिस प्रकार बाह्य जगत् में पदार्थ का विकास होता रहता है, उसी प्रकार आन्तरिक जगत् में चेतना के निर्देश पर विकास होता है। हम देख नहीं पाते हैं कि यह किस प्रकार संभव होता है। भावनाओं में होने वाले विकास को आपने नहीं देखा है, तो आज रात जाकर इस पर विचार कीजियेगा। मनुष्यों के आदर्शों में विकास होता है और उसकी प्रतिक्रियाओं में भी परिवर्तन और विकास होता है। यह विकास न केवल शारीरिक या भौतिक है और न केवल पारलौकिक ही है। विकास वह क्रिया है जो जड़ से चेतन तक समानान्तर रूप में चल रही है। यदि विकास मानसिक स्तर पर

होता है, तो शारीरिक स्तर पर भी होना चाहिए। इसलिये हठयोग में इड़ा और पिंगला, दो शब्दों का प्रयोग आया है।

झीनी-झीनी बीनी चदरिया॥
काहे कै ताना काहे कै भरनी, कौन तार से बीनी चदरिया॥
इड़ा पिंगला ताना भरनी, सुखमन तार से बीनी चदरिया॥

ये जो दो शब्द, इड़ा-पिंगला आये हैं, सम्पूर्ण विकास को दो क्षेत्रों में बाँटते हैं। एक विकास है मनोमय और दूसरा विकास है प्राणमय। इड़ा मानसिक शक्ति का प्रतीक है और पिंगला प्राणशक्ति का। प्राणशक्ति से क्रिया की सृष्टि हुई है, कर्म की सृष्टि हुई, जन्म और मृत्यु की सृष्टि हुई है। जो जीवन का आधार है, वही प्राण है। मन में चैतन्य की सृष्टि हुई है – सोचना, समझना, जानना, याद करना। मनुष्य का पूर्ण व्यक्तित्व इन दो शक्तियों पर आधारित है। अगर इड़ा और पिंगला में या प्राणशक्ति और मनःशक्ति में संतुलन नहीं होगा तो मनुष्य का व्यक्तित्व असामान्य हो जायेगा। केवल प्राणशक्ति के विकास से मनुष्यों में हिंसा, उद्दण्डता की अभिव्यक्ति होगी। केवल प्राणशक्ति के अत्यधिक बढ़ जाने का मतलब है कि मनःशक्ति उसको संतुलित नहीं कर पा रही है। हम नित्य अपने घर में अपने बच्चों को और स्वयं को देखते हैं। यह प्राणशक्ति, जो इस पिण्ड में है, ब्रह्माण्ड की प्राणशक्ति में मिली हुई है, जैसे शब्द के साथ शब्द मिला होता है। आकाशवाणी से शब्दों का प्रसारण होता है और हम सुनते हैं, यही पिण्ड और ब्रह्माण्ड का सीधा सम्बन्ध है।

यहाँ प्राण, जो प्रत्यक्ष रूप से क्रिया का आधार है, जन्म-मृत्यु और जीवन का आधार है, वह व्यक्तिगत प्राण है। यह ब्रह्माण्डव्यापी प्राण का अंश है। योगाभ्यास करने वाला ब्रह्माण्ड से प्राणों को खींचता है और अपनी पिंगला नाड़ी के द्वारा अपने शरीर में इस अतिरिक्त प्राण का संचार कर सकता है। इसी प्रकार इड़ा नाड़ी मानसिक जीवन का प्रतीक है, भावनाओं का मूल है, इच्छाओं का मूल है, संकल्प का मूल है। यदि यह इड़ा नाड़ी शून्य हो जाये, तो हम एकदम पत्थर बन जायेंगे। कैसे पत्थर? जीवित पत्थर। जीवन का तत्त्व प्राण है और चेतना का तत्त्व मन है, जो इड़ा नाड़ी है। यदि हम इस इड़ा नाड़ी को संतुलित नहीं करते, तो वही होता जो आज पश्चिम के देशों में हो रहा है।

आज आशायें, आकांक्षायें, महत्त्वाकांक्षायें प्रबल हो गयी हैं। आपने स्पेन का 'बुल-फाइटिंग' देखा होगा। बहुत-से साँडों को मैदान में लेकर लाल

कपड़ा दिखा-दिखा कर उत्तेजित किया जाता है तो वे मारने के लिए दौड़ते हैं। उसी प्रकार संसार में विषयों के द्वारा जब इन्द्रियाँ साँड की तरह उद्विग्न और उन्मत्त हो जाती हैं, उस समय प्राणशक्ति उसे सहन नहीं कर पाती, संभाल नहीं पाती। तो क्या होता है? उस व्यक्ति को पागलखाने जाना पड़ता है। इसलिए मानसिक शक्ति और प्राणशक्ति में संतुलन होना आवश्यक है। यही हठयोग है – *हकारेणोच्यते सूर्यः ठकारः चन्द्रः संज्ञकः*।

'हठ' शब्द में 'ह' और 'ठ' बीज मंत्र हैं। ये दोनों शक्तियों के प्रतीक हैं। शरीर के अंदर जो 72000 नाड़ियाँ हैं, वे शरीर के छोटे-छोटे अंगों में इन दो शक्तियों को प्रवाहित करती हैं। इन नाड़ियों का शुद्ध होना आवश्यक है। अगर इन नाड़ियों को शुद्ध नहीं करोगे, तो जिस प्रकार बिजली का प्रवाह शुद्ध तारों में ही संभव है, उसी प्रकार अशुद्ध नाड़ियों से प्राणों का प्रवाह ठीक तरह से नहीं होगा, मनःशक्ति का विकास ठीक तरह से नहीं होगा।

अब पश्चिम के वैज्ञानिकों को पता चला कि हम एक विद्या, एक संस्कृति को कब्रगाह में दबाने चले थे, यह क्या हो गया। मुझसे एक वैज्ञानिक ने कहा कि हमसे गलती हो गयी। वह मनोविज्ञान का एक बड़ा वैज्ञानिक है। उसने आगे कहा कि योग को धर्म का अंग माना जाता था, अब उसे विज्ञान का आधार दे दिया गया है। मजा यह है कि विज्ञान सच बोलता है, ईमानदारी से बोलता है, वह यह नहीं कहता कि योग का आधार भारतीय संस्कृति या वैदिक धर्म है, जिसमें सब गलत ही होना चाहिए। इस प्रकार पिछले चौदह-पंद्रह वर्षों में अनेक तथ्य एकत्र किये गये हैं। उन तथ्यों को मैंने कम-से-कम 48 अलमारियों में फाइलों में रखा है। प्राणायाम के द्वारा मस्तिष्क में होने वाले स्पन्दनों को वैज्ञानिक ढंग से समझाकर रखा गया है। बायीं नाक से श्वास ले लो और कुम्भक लगाओ, साथ में मूल बंध लगाओ और दाहिनी से श्वास को बाहर निकालो। 'यह क्या हुआ' पूछने पर कोई भी साधारण आदमी कहेगा कि श्वास फेफड़े में चली गयी, ऑक्सीजन चली गयी।

हम कहते हैं, 'नहीं, प्राणायाम का पहला असर मस्तिष्क पर होता है।' जब दाहिनी नाक से श्वास जाती है, तो मस्तिष्क का एक हिस्सा प्रभावित होता है। परन्तु जब बायीं से श्वास जाती है तो मस्तिष्क का दूसरा हिस्सा प्रभावित होता है। जब दोनों नलिकाओं से श्वास जाती है, तो पूरा मस्तिष्क प्रभावित होता है। उस मस्तिष्क में चेतना के जो निष्क्रिय सर्किट हैं, वे काम करने लगते हैं। प्रतिभायें उजागर हो जाती हैं। प्रसिद्ध भले ही न बनो, मगर

मनुष्य की मानसिक क्षमता और प्रतिभा का निश्चित रूप से विकास हो सकता है और होता है। यह तथ्य है।

प्राणायाम मनुष्य की प्रतिभा और चेतना के विकास की प्रक्रिया है। हृदय को असंतुलित से संतुलित बनाने की भी प्रक्रिया है। हमारे साथ डॉ श्रीनिवास आये हैं, वे आपको बतलायेंगे। मैं ऐसा सोचता हूँ कि जब हम मनुष्य के विकास की बात कहते हैं, तो हम उसके मूल व्यक्तित्व को भूल जाते हैं। उसका मूल व्यक्तित्व शरीर और मन पर आधारित है। इस पर हमने मुंगेर में काम किया। इस सम्मेलन में हमने कहा कि आज के विद्वानों को बुलाओ, वे आपको बतलायेंगे कि दुनिया में चिकित्सा विज्ञान और आधुनिक विज्ञान में योग के विषय में क्या विचार प्रकट हुए हैं। योग की अनेकानेक क्रियायें हमलोगों को हठयोग और राजयोग के ग्रंथों में, गीता में, योग वाशिष्ठ में पढ़ने को मिलती हैं। उसका दर्शन क्या है, कुछ और भी है? यदि है, तो क्या है? फिर सबसे जरूरी चीज क्या है?

चिकित्सा विज्ञान में बहुत जगह पर स्पष्ट रूप से स्वीकार किया गया है कि यह हमारे बस की बात नहीं, हम तुमको दवाई देते रहेंगे। मैंने कहा न कि विज्ञान में ईमानदारी बहुत होती है, वह कहता है कि हम तुमको दवाई देते रहेंगे। मगर तुम्हारा रोग सधेगा या नहीं, यह हम कह नहीं सकते। दुनिया में सब जगह इस संदर्भ में जो प्रयोग और अनुभव हुए हैं, उन सबको मैं अभी

आपके सामने रखूँगा। मेरा स्कैण्डिनेवियन देशों के अनेक पागलखानों से व्यक्तिगत सम्बन्ध है। मैं निश्चित रूप से आँकड़ों के साथ कह सकता हूँ कि 1968 से 1978 तक, पिछले दस वर्षों में जितने पागल लड़के-लड़कियों को हिस्टिरिक और न्यूरोटिक पागलखानों से इलाज के बाद जाने दिया गया है, उतना शायद पिछले किसी दशक में नहीं किया गया होगा।

पहले वे लोग मुझे जादूगर समझते थे। मैं उनके पागलखानों में जाता था और सुबह सबको नमक-पानी पिलाकर उल्टी कराता था, और पखाना कराता था, नाक से नेति कराता था, 15 मिनट बैठाकर भस्त्रिका कराता था। वे सोचते थे कि इससे कुछ ठीक-ठाक नहीं होता है, हिन्दुस्तान का महात्मा है, छू-मंतर कर दिया होगा, इसलिये ठीक हो गया। मगर अब जैसे-जैसे दिन बीतते जा रहे हैं, उनको मालूम पड़ रहा है कि बात ऐसी नहीं है। यह केवल आध्यात्मिक अभ्यास नहीं है। जो लोग ईश्वर पर विश्वास करते हैं, उनके लिये तो है, मगर जो लोग नास्तिक हैं, जो लोग प्रकृति को भी नहीं मानते हैं, जो जीवन को एक बायोलॉजिकल एक्सीडेन्ट मानते हैं, जो जीवन को केवल पदार्थ की सत्ता की अभिव्यक्ति मानते हैं, ऐसे दार्शनिकों और विचारकों के लिये ध्यान जीवन में कहाँ पर सहयोगी और सहायक हो सकता है, यह भी आपको बतलाऊँगा।

मैं योग का शिक्षक नहीं हूँ, मैं केवल समझाता हूँ। योग की शिक्षा देने वाले हजारों की संख्या में तैयार करने होंगे। भारत बहुत बड़ा देश है, यह काम मुझसे नहीं हो सकता। मैं केवल योग को समझाना जानता हूँ। मैंने योग को समझाने का जो काम किया है, उसे सोच-समझकर मुंगेर में किया है। आप लोग जानते हैं कि धनबाद में बहुत बड़ा आश्रम है, फिर भी मैंने यह मुंगेर में किया, क्योंकि मुझे मुंगेर में अनेक वर्षों तक रहने का मौका मिला है। वहाँ पर मैंने अध्ययन किया, समझा और सोचा कि वही भूमि है, जहाँ से योग गंगा दुनिया में बहेगी। मुंगेर केवल बिहार का होकर नहीं रहेगा, मुंगेर विश्व का होकर रहेगा।

मैं तो संकोचरहित आदमी हूँ, स्पष्ट कहता हूँ कि इस योग की गंगा को मुंगेर से निकालकर वैदिक-अवैदिक संस्कृतियों के देशों में फैलाने का मैं भगीरथ हूँ। मैं कुछ कर सकता हूँ, इसलिये नहीं कि मेरे अंदर कोई क्षमता है, लेकिन मुझे अपने जीवन से एक बात मालूम हो गयी है। इस शरीर में बहुत-से विकार हैं, कफ, वात, पित्त इत्यादि। एक दिन पखाना नहीं हुआ तो सिर में दर्द हो जाता है। आप तो जानते ही हैं कि एक बार यदि समय से खाना नहीं खाया, तो गैस्ट्रिक अल्सर हो जाता है। एक बार यदि शरीर में कुछ हो गया,

तो रातभर नींद नहीं आती। यह एक पक्ष है और दूसरा पक्ष है विचारों का। यह एक विक्षेप है, आदमी सोचता रहता है, सोचता रहता है, उसके विचार उसकी मदद नहीं करते हैं। इसी से बहुत-से लोग जीवन में दुःखी और अशांत रहते हैं। इसलिये हमें योग को देश के सांस्कृतिक पहलू का पहला अंग बनाना होगा। शायद भारत के धर्मनिरपेक्ष आधार पर योग फिट बैठ सकता है, क्योंकि यह भी एक धर्म निरपेक्ष विज्ञान है।

योग यदि एक सात्त्विक साधु के लिये उपयोगी है, तो मन के विक्षेपों से पागल गृहस्थ के लिये भी आवश्यक है। जहाँ योग समाधि का साधन है, वहाँ योग मन के विक्षेपों के निराकरण का भी साधन है। जहाँ योग से हम परमेश्वर पर चित्त लगा सकते हैं, वहीं योग के द्वारा रात को बैठकर अपने चित्त के अंदर की चिन्ता और उलझन को भी दूर कर सकते हैं। इसलिये इस सम्मेलन को हमलोगों ने यहाँ आयोजित किया है। इसमें हमारे जो विद्वान डॉक्टर और महात्मा लोग आये हुए हैं, वे अपने विचार प्रस्तुत करेंगे।

इस देश में जो ऋषि-मुनि हुए हैं, उनके प्रति हम अपनी श्रद्धा प्रकट करते हैं और ऐसा समझते हैं कि हम जाग रहे हैं, कोई अच्छा परिवर्तन हमारे जीवन में होने जा रहा है। मैं यह चाहता हूँ कि जैसे हर युग में बिहार ने बड़े-बड़े परिवर्तनों का नेतृत्व किया है, वैसे ही आज के युग में भी इसे बहुत बड़े आध्यात्मिक परिवर्तन का पौरोहित्य करना होगा। इसलिये योग के विषय में जो विचार चल रहे हैं, ये प्रारंभ हुए हैं और विश्व के सब देशों में फैल रहे हैं। पाँच या छः दशक पहले लोग मनोविज्ञान को कुछ नहीं समझते थे, आज मनोविज्ञान समाज के हर क्षेत्र को छूता है। उसी प्रकार एक-दो दशक पहले लोग योग को मानव जीवन से अलग समझते थे, पर अब योग मानव जीवन के निकट आ रहा है।

अगले दो या तीन दशकों में योग को एक फैकल्टी के रूप में आना है, विद्या के रूप में आना है और संस्कृति के रूप में आना है। यह मेरे अपने जीवन का स्वप्न है। हर आदमी की एक इच्छा होती है, जैसे, मेरी लड़की की शादी हो जाये या मेरा लड़का ग्रेजुएट हो जाये या मैं मंत्री-प्रधानमंत्री बन जाऊँ या मेरा बड़ा घर बन जाये। अपने मन का केवल एक संकल्प है और वह संकल्प एकदम स्पष्ट है – योग को विद्या के रूप में, फैकल्टी के रूप में, संस्कृति के रूप में, विज्ञान के रूप में आना चाहिए। योग को हमें एक संस्कृति, एक विद्या और एक विज्ञान के रूप में देखना है।

– 2 नवम्बर 1978, धनबाद योग सम्मेलन

योग के लिए प्रासंगिक संस्कार

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

योग में जिन संस्कारों पर जोर दिया जाता है वे सामाजिक नहीं, बल्कि मनोगम्य और भावगम्य हैं, क्योंकि ये मन और भावनाओं से संबंधित हैं। जीवन में सही चिंतन से उत्पन्न अभिव्यक्तियों को मनोगम्य संस्कार कहते हैं। आप किसी वृद्ध महिला को सड़क पार करने की कोशिश करते हुए देखते हैं और सोचते हैं कि आपको उसकी मदद करनी चाहिए। ऐसा सोचकर आप उसकी मदद कर देते हैं। यह सत्कर्म तब किया गया जब आपको किसी के संबंध में जरूरत महसूस हुई, जिसके बाद उचित विचार आया।

एक अन्य स्थिति भी हो सकती है। एक आदमी आपके दरवाजे पर आकर कहता है, 'मेरे हाथ में फ्रैक्चर हो गया है, क्या आप मुझे डॉक्टर से इलाज कराने के लिए कुछ रुपये दे सकते हैं?' आप उसे पैसे देते हैं और वह अपने टूटे हुए हाथ में प्लस्तर लगवा लेता है। आपके द्वारा की गई यह मदद मनोगम्य संस्कार के कारण है। आप किसी अच्छे विचार से प्रेरित हुए, परिस्थितियों को समझा और स्थिति को बेहतर बनाने के लिए कुछ अच्छा किया। जब आप किसी चीज पर गहराई से विचार करते हैं ताकि उसका सकारात्मक परिणाम प्राप्त हो, या दूसरे शब्दों में, जब आप विवेक का प्रयोग करते हैं, तो वह मनोगम्य संस्कार है।

मन आमतौर पर नकारात्मक होता है। आप सोच सकते हैं, 'यह आदमी मेरे पास सिर्फ पैसे ऐंठने आया है। इसने कई और लोगों के पास जाकर अपना टूटा हुआ हाथ दिखाया होगा और उनसे भी पैसे लिए होंगे।' लेकिन जब आप उसका टूटा हुआ हाथ देखते हैं, तो आप इस नकारात्मक विचार पर अमल करके उसकी उपेक्षा नहीं करते, बल्कि एक मजबूत सकारात्मक विचार लाकर उसकी मदद करते हैं। आप प्रतिक्रिया नहीं करते, बल्कि करुणा से प्रेरित होते हैं और जो उचित है, वही करते हैं।

कई बार आपको मन के साथ संघर्ष करके उचित विचार को दृढ़ करना पड़ता है। अगर विचार आए कि 'अरे, वह मुझसे पैसे ऐंठने की कोशिश कर रहा है, वह और भी कई लोगों के पास गया होगा', तो आपको यह भी विचार लाना होगा, 'अगर उसे दूसरों से पैसे मिल गये होते तो वह पहले डॉक्टर

के पास जाता, मेरे पास नहीं आता। शायद किसी और ने उसे कुछ दिया ही नहीं, तो मैं ही दे दूँ।' इस तरह आप नकारात्मक विचारों को दूर करते हैं और खुद को उनमें फँसने नहीं देते। इसलिए विचारों में उपयुक्तता का ध्यान रखना जरूरी है, तभी व्यवहार और वातावरण में उपयुक्तता आती है।

यम-नियम के माध्यम से संस्कार

अन्य प्रकार के संस्कार भावगम्य हैं, जो आध्यात्मिक जीवन के लिए विशेष रूप से उपयोगी हैं। ये यम और नियम द्वारा प्राप्त होते हैं। यम-नियम और कुछ नहीं, केवल अच्छे संस्कार हैं। ये जीवन में जो सकारात्मक अभिव्यक्तियाँ लाते हैं, वे जीवन में गुणात्मक परिवर्तन, सुधार और उपलब्धि उत्पन्न करेंगी। इसलिए, यम-नियमों को अपने से अलग न समझें, बल्कि उन्हें अपनी आध्यात्मिक यात्रा की स्वाभाविक उपलब्धियों एवं अभिव्यक्तियों के रूप में देखें।

दिन के दौरान आप किचन, बाथरूम, इस इमारत या उस इमारत तक पैदल जाते हैं, और हर बार आप कहीं पहुँचकर एक उद्देश्य पूरा करते हैं। अब अगर आप सोचेंगे, 'अरे, मुझे इतना चलना पड़ता है, मैं थक जाऊँगा' तो आप उस सफर को आराम से पूरा नहीं कर पाएँगे। आप बीच में ही बैठ जाएँगे। दूरी आराम से तय नहीं होगी, जबकि यात्रा तो स्वाभाविक और सहज होनी चाहिए।

यदि आप यम-नियमों को अपने सामान्य व्यवहार से अलग मानेंगे, तो उन्हें आत्मसात् करना कठिन होगा। यदि आप उन्हें अपने जीवन का हिस्सा मानेंगे, तो वे सहज रूप से व्यक्त होंगे। उदाहरण के लिए, एक बच्चा कुछ गलत करता है। माँ उससे कहती है, 'बेटा, अपने पिता को मत बताना। वे तुम्हें डाँटेंगे।' या वह कह सकती है, 'तुमने जो भी गलती की है, अपने पिता को स्पष्टता और ईमानदारी से बता दो।' इस एक वाक्य के साथ वह अपने बच्चे को नकारात्मक या सकारात्मक संस्कार प्रदान कर देती है। यदि माँ उसे अपनी गलतियाँ छिपाने के लिए कहती है, तो वह जीवनभर अपने पिता से अपने अच्छे और बुरे, दोनों कार्यों को छिपाएगा और दोनों के बीच एक दूरी बन जाएगी। यदि माँ उसे ईमानदार होने के लिए प्रेरित करती है, तो वह जीवनभर अपने पिता से खुलकर बात कर पाएगा।

इस प्रकार, यम और नियम कुछ गुणों की स्वाभाविक अभिव्यक्तियाँ हैं और हमारी जीवनशैली का हिस्सा बन जाते हैं। जब ये जीवनशैली और व्यवहार का अंग बन जाते हैं, तो आपका स्वभाव स्वतः ही बदल जाता है।

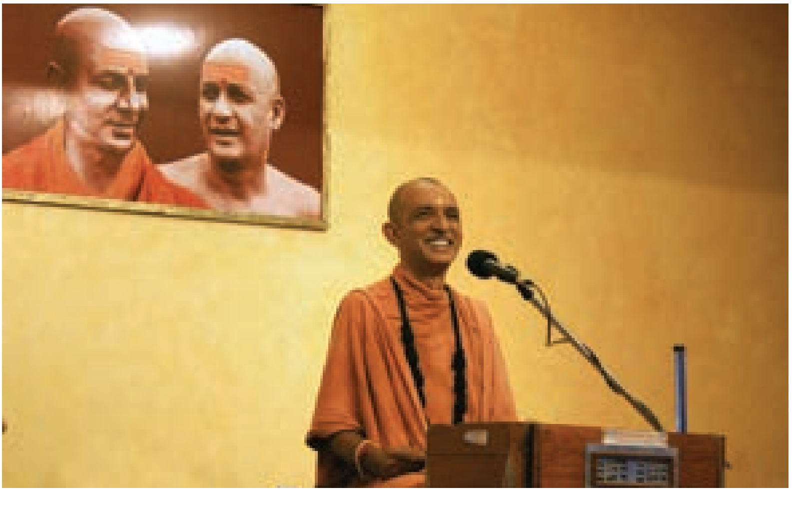

जब स्वभाव बदल जाता है तो आध्यात्मिक पथ पर चलने के लिए परिश्रम नहीं करना पड़ता। यात्रा सहज हो जाती है।

यम-नियमों का मुख्य उद्देश्य जीवन की सकारात्मकता को उजागर करना है। जब जीवन की सकारात्मकता अभिव्यक्त होती है तो मन स्थिर और शांत हो जाता है। अभी आप अगर ध्यान करने बैठते हैं तो मन अशांत होता है। यदि आप उस अशांति के कारण का पता लगाने का प्रयास करें तो आपको कोई नकारात्मक तत्त्व मिलेगा जिसने आपको विचलित किया है। यह सुई की नोक जैसा छोटा और सूक्ष्म हो सकता है, फिर भी यह आपको पूरी तरह से उद्विग्न कर देता है। जिस प्रकार शरीर बहुत बड़ा होने पर भी सुई की छोटी-सी नोक उसको चोट पहुँचा देती है, उसी प्रकार ध्यान में छोटी-सी भी नकारात्मकता आपको चुभेगी और फिर आप खुद को मानसिक रूप से खुजलाना शुरू कर देंगे। एक बार यह खुजलाना शुरू हो जाए, तो मन में बेचैनी के अलावा कुछ नहीं होता। तब आपको फिर से सकारात्मकता लाने का प्रयास करना होगा। सकारात्मक स्थिति बनाने का यह प्रयास ही संस्कार को आत्मसात् करना है। यह मन की अवस्था है जो आपको सही दिशा में निर्देशित करती है।

सामंजस्यपूर्ण रूप की प्राप्ति

संस्कार आपके संपूर्ण स्वरूप को सामंजस्यपूर्ण और एकीकृत बनाते हैं, जिससे एक नया व्यक्तित्व प्रकट होता है। आप एक बेहतर स्वरूप, एक बेहतर स्वभाव प्राप्त करते हैं। हमने अब तक जिन संस्कारों अथवा यम-नियमों पर चर्चा की है उनमें मनःप्रसाद और जप, क्षमा और नमस्कार, दांति और इंद्रिय-निग्रह, अद्वेष और मैत्री तथा भाव-शुद्धि और तितिक्षा शामिल हैं।

जीवनशैली के अंतिम यम-नियम हैं – शांतता और नियमिता। यदि आप पिछले सभी यम-नियमों का पालन करते हैं तो शांतता और नियमितता आपके जीवन में स्वाभाविक रूप से आनी चाहिए। यदि ऐसा नहीं होता है तो कहीं-न-कहीं कुछ गड़बड़ है। यम-नियम के ये छह युगल मिलकर आपको एक ऐसी स्थिति में लाएँगे जहाँ जीवनशैली व्यवस्थित और संतुलित होगी, मन स्थिर और शांत होगा, विक्षेप समाप्त हो गये होंगे, भौतिक भय आध्यात्मिक विश्वास में बदल गया होगा, जीवन का एकाकीपन उच्चतर सत्ता के प्रति समर्पण में बदल गया होगा, और तब एक नई यात्रा शुरू होगी।

– 17 जुलाई 2018, गंगा दर्शन

स्वाध्याय का महत्त्व

स्वामी सत्यसंगानन्द सरस्वती

साधना के समय कभी-कभी ऐसे भी क्षण आते हैं जब आप निराश हो जाते हैं तथा आपकी श्रद्धा विचलित होने लगती है। दीर्घकाल तक परिश्रमपूर्वक नियमित साधना करने पर भी जब कोई आंतरिक अनुभूति नहीं होती तब आपको अन्तिम लक्ष्य मृगमरीचिका जैसा लगता है। जब तक आपको अन्तिम अनुभूति नहीं होती, वह आपको काल्पनिक, दुर्लभ और पहुँच से परे लगती है। कदाचित् आप अपने लक्ष्य को पाने में असफल रहते हैं तो उत्साह के अभाव में और भ्रम के कारण या तो साधना में कटौती करते हैं, अथवा उसे एकदम बन्द कर देते हैं।

अब यदि ऐसे समय आपको उत्साहित करने वाला न हो, आपकी विचलित श्रद्धा को दृढ़ करने वाला न हो, तो आप हताश हो सकते हैं। ऐसा तो कभी भी, किसी के भी साथ हो सकता है। आध्यात्मिक साधना में ऐसे क्षण तो आते ही हैं। यह आशा करना कि हर समय आप प्रफुल्लित, आशान्वित और श्रद्धावान् बने रहेंगे, गलत है। ऐसा सोचना अव्यावहारिक है।

अनिर्णय, अविश्वास और उत्साह में कमी हमारे अस्तित्व के अनिवार्य अंग हैं। अब यह आपके ऊपर निर्भर है कि आप इनसे किस प्रकार अप्रभावित रह सकते हैं। सूरज भी तो कभी-कभी बादलों से ढक जाता है, परन्तु जैसे ही बादल छँटते हैं, वह पहले से कहीं अधिक चमकदार दिखता है। इसलिये इन अवसरों से डरने की कोई आवश्यकता नहीं है। जब आपको लगे कि आपकी श्रद्धा और विश्वास की जड़ें हिल रही हैं तब इस स्थिति से भी कुछ-न-कुछ प्राप्त कीजिये। जब शंका और अविश्वास के बादल छँट जायेंगे तब आपको साधना में पहले से कहीं अधिक उत्साह, आनन्द एवं संतोष का अनुभव होगा।

साधना के साथ अपने उत्साह और प्रेरणा को तीव्र करने की युक्तियाँ भी खोजते रहिये। इनमें से अत्यन्त उपयोगी और रचनात्मक युक्ति स्वाध्याय को माना जाता है। इसके अंतर्गत शास्त्रों का अध्ययन, आत्म-निरीक्षण और आत्म-विश्लेषण आते हैं। साधक को अपने साधनामय जीवन में स्वाध्याय को कभी नहीं छोड़ना चाहिए।

हर समय संत-महात्माओं का सत्संग करना तथा प्रवचन सुनना सम्भव नहीं होता, परन्तु आध्यात्मिक साहित्य का कहीं भी और कभी भी स्वाध्याय किया जा सकता है। जब भी आपको लगे कि आपका मन साधना में नहीं लग रहा है, आपकी श्रद्धा और विश्वास डगमगा रहे हैं तो उन्हें पुनर्स्थापित करने के लिये स्वाध्याय प्रारम्भ कीजिये। इससे आप पुनः सन्तुलित होंगे तथा आपकी श्रद्धा और विश्वास पूर्ववत् दृढ़ होंगे। जब आप उन महान् आत्माओं के जीवनवृत्त को पढ़ेंगे, तो देखेंगे कि किस आत्मविश्वास के साथ उन्होंने जीवन के आघातों को सहकर आत्म-साक्षात्कार के लक्ष्य को प्राप्त किया था। तब आप में भी आत्मविश्वास और लक्ष्यप्राप्ति का संकल्प एक बार फिर दृढ़मूल हो जायेगा।

साधकों के लिये श्रीमद्भगवद्गीता एक ऐसा ही उपयोगी तथा मार्गदर्शक ग्रंथ है। इस ग्रंथ की विशेषता यह है कि यह किसी धर्म अथवा संप्रदाय विशेष में आस्था रखने का उपदेश नहीं देता। यह एक ऐसे व्यावहारिक दर्शन का उपदेश देता है जो प्रत्येक व्यक्ति के लिये उपयोगी है, भले ही उसकी धार्मिक मान्यतायें और विश्वास कुछ भी हों। गीता जीवन में आपकी स्थिति अथवा

उत्तरदायित्वों में जरा भी हस्तक्षेप नहीं करती। वह न तो आपको अपने धर्म, श्रद्धा अथवा विश्वास को त्यागने की सलाह देती है और न ही अन्य धर्मों को ग्रहण करने के लिये प्रेरित करती है। वह आपके निर्वाचित आध्यात्मिक पथ को आलोकित कर उस पर दृढ़तापूर्वक आगे बढ़ने के लिये आपको प्रेरणा तथा उत्साह प्रदान करती है। उसका लक्ष्य आपको बचाना, काल्पनिक भय से रक्षा करना तथा आपकी चेतना का उत्तरोत्तर विकास करना है।

संसार में शान्ति और सन्तुलनपूर्वक रहना असंभव नहीं है। गीता हमें यही सिखाती है। गीता की पृष्ठभूमि कुरुक्षेत्र का युद्ध प्रांगण है। इस युद्ध का तात्पर्य कुरुक्षेत्र में कौरवों तथा पाण्डवों के बीच लड़े गये महाभारत युद्ध से ही नहीं, बल्कि हममें से प्रत्येक के भीतर निरन्तर हो रहे महाभारत से है। जब अर्जुन युद्ध के मैदान में असंख्य योद्धाओं को युद्ध की प्रतीक्षा में खड़ा देखता है, जब उनमें उसे अपने अनन्य निकट संबंधियों के चेहरे दिखलाई पड़ते हैं, तो वह बुरी तरह विचलित हो जाता है। उसे लगता है कि युद्ध नितांत व्यर्थ एवं मूर्खतापूर्ण कार्य है। वह लड़ने से साफ इन्कार कर देता है।

अर्जुन के अनिर्णय और विषाद को दूर करने के उद्देश्य से श्रीकृष्ण उसे गीता के उपदेश द्वारा एक उपयुक्त मनोवृत्ति अपनाने की सलाह देते हैं। वे अर्जुन से कहते हैं कि कर्म-विमुखता, कर्म के सिद्धान्त के विरुद्ध है। वे कहते हैं कि मनुष्य को कर्म के त्याग द्वारा नहीं, बल्कि कर्म करते हुए अपनी चेतना को विकसित करना चाहिए, क्योंकि मनुष्य के हर कार्य का सम्बन्ध उसकी चेतना के विकास से होता है।

अर्जुन कर्म से मुक्ति चाहता है। परन्तु श्रीकृष्ण कहते हैं कि यह सम्भव नहीं है, क्योंकि कर्म न केवल शरीर द्वारा, बल्कि मन के द्वारा भी होते हैं। कर्म चेतन तथा अवचेतन मन के अनिवार्य कार्य होते हैं। जब तक प्रकृति में प्रेरणा देने की शक्ति है, कर्मों को निर्मूल नहीं किया जा सकता। कर्म केवल तभी बन्धनकारक होते हैं जब उन्हें करते समय हमारे भीतर दुःख-सुख, लाभ-हानि तथा राग-द्वेष की भावना रहती है। कर्म नहीं, बल्कि उसके फल की इच्छा बन्धनकारी होती है। जब तक आप इस शरीर में हैं, कर्म से छुटकारा नहीं मिल सकता, परन्तु यदि कर्म के पीछे फलासक्ति न हो तो वह मोक्ष और ज्ञान का माध्यम हो सकता है।

कर्म तीन प्रकार के होते हैं – उचित, अनुचित तथा अकर्म। कर्म न करने से आलस्य और निष्क्रियता आती है। अनुचित कर्म का आधार वासना,

अज्ञान और आंतरिक संकेतों को न समझ पाना होता है। उचित या सही कर्म वह होता है जो हमारे भीतर नियंत्रण और सामंजस्य लाता है। अन्य शब्दों में कह सकते हैं कि सही कर्म उच्च आत्मज्ञान में बदल जाता है। जब आप कर्मफल का परित्याग कर देते हैं, तब वह आत्म-साक्षात्कार का निमित्त बनता है। वह बन्धनकारक नहीं होता। गीता कर्म के बन्धन से मुक्ति का उपदेश देती है, कर्म त्यागने का नहीं।

यही कर्मयोग का दर्शन है जो गीता का प्रमुख उपदेश है। पूर्ण सजगता तथा एकाग्रतापूर्वक अपने निर्धारित कार्य करते रहिये। जब आप अपने काम में पूरी तरह दत्तचित रहते हैं तो आपका निम्न अहंकार सिर नहीं उठा पाता। अनेक अवसरों पर आपने इसका अनुभव किया होगा।

श्रीकृष्ण स्वयं एक गृहस्थ होने के साथ-साथ महान् कर्मयोगी भी थे। भले ही वे ईश्वरावतार रहे हों, पर हम उन्हें एक पूर्ण मानव के रूप में देखते हैं। वैराग्य उनके जीवन का महान् आदर्श रहा है। वे काम के लिये काम करते थे। आप भी यदि ऐसा करें तो कार्य आपके लिये आनन्द का स्रोत बनेगा, परन्तु उसके फल की आशा कर उसके बन्धन में न बंधिये। युद्धक्षेत्र में श्रीकृष्ण अर्जुन को उत्साहित करते हुए कहते हैं – 'वह जो अत्यन्त क्रियाशील रहते हुए भी अपने भीतर शान्ति और स्थिरता का अनुभव करता है, सचमुच महान् योगी और मूर्धन्य विद्वान् है।'

भले ही आप बाजार के बीच खड़े हों या बड़ी विपत्ति में फँसे हों, आपके भीतर वही शान्ति और सन्तुलन कायम रहेगा जो गहरे ध्यान की अवस्था में प्राप्त होता है। यदि आप ऐसा कर पायें तो समझिये कि आपने जीवन के रहस्य को समझ लिया है और स्वयं अपने स्वामी बन गये हैं, यदि नहीं तो अवश्य आप में कहीं कुछ कमी रह गयी है।

गीता वह महान् ग्रंथ है जिसमें मानवता के उत्थान के लिये आध्यात्मिक और व्यावहारिक जीवन का स्वस्थ समन्वय किया गया है। गीता में वह महान् ज्ञान भरा पड़ा है जो आध्यात्मिक जीवन में सबका मार्गदर्शन कर सकता है। यही एकमात्र ऐसा ग्रंथ है जिसमें उच्च चेतना प्राप्त करने के मार्गों के बीच किसी प्रकार का विरोध नहीं है। यह आपके समक्ष केवल आपका लक्ष्य रखती है तथा उसे प्राप्त करने का मार्ग दिखाती है।

शांतता का अनुभव

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

यौगिक जीवन के अंतिम यम और नियम शांतता और नियमितता हैं। जब आप स्वयं को पहले पाँच यम-नियमों में स्थिर कर लेते हैं तो इसका स्वाभाविक परिणाम होता है मन की शांत अवस्था।

शांतता का तात्पर्य है कि मन सदैव स्थिर और शांत अवस्था में रहे। यह मन में अनुभव की जाने वाली एक प्रक्रिया है। आप प्रतिदिन शांतता की अवधि बढ़ा सकते हैं – एक घंटे से दो, तीन, चार घंटे तक। जैसे आपको प्रसन्नता की अवधि बढ़ाने के लिए कहा जाता है, वैसे ही आपको शांतता की अवधि भी बढ़ाने का प्रयास करना होगा। ऐसा करने के लिए आपको अपने जीवन में अशांति के कारणों से अवगत होना होगा, इन कारणों को अपने भीतर देखना होगा। लोग बड़ी आसानी से कह देते हैं, 'मुझे शांति चाहिए' मानो बाज़ार से शांति का एक पैकेट खरीदना संभव हो।

संसार में सबसे कठिन काम है शांति पाना, क्योंकि इसके लिए हर व्यक्ति को अपना रास्ता खुद खोजना पड़ता है। एक व्यक्ति जिस कठिनाई का सामना करता है, वह दूसरे व्यक्ति की कठिनाई से अलग होती है। हो सकता

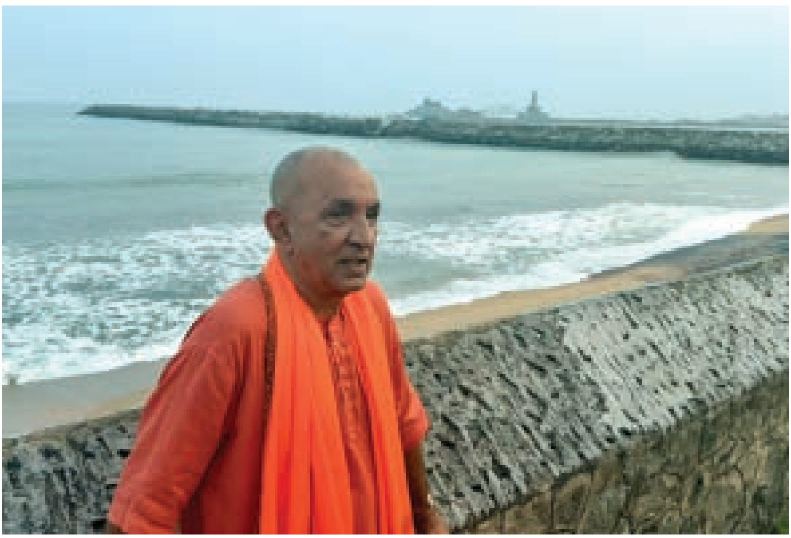

योग साधना सत्र : अध्यात्म में प्रवेश
2026
श्री स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती
योग साधना सत्र - अध्यात्म में प्रवेश

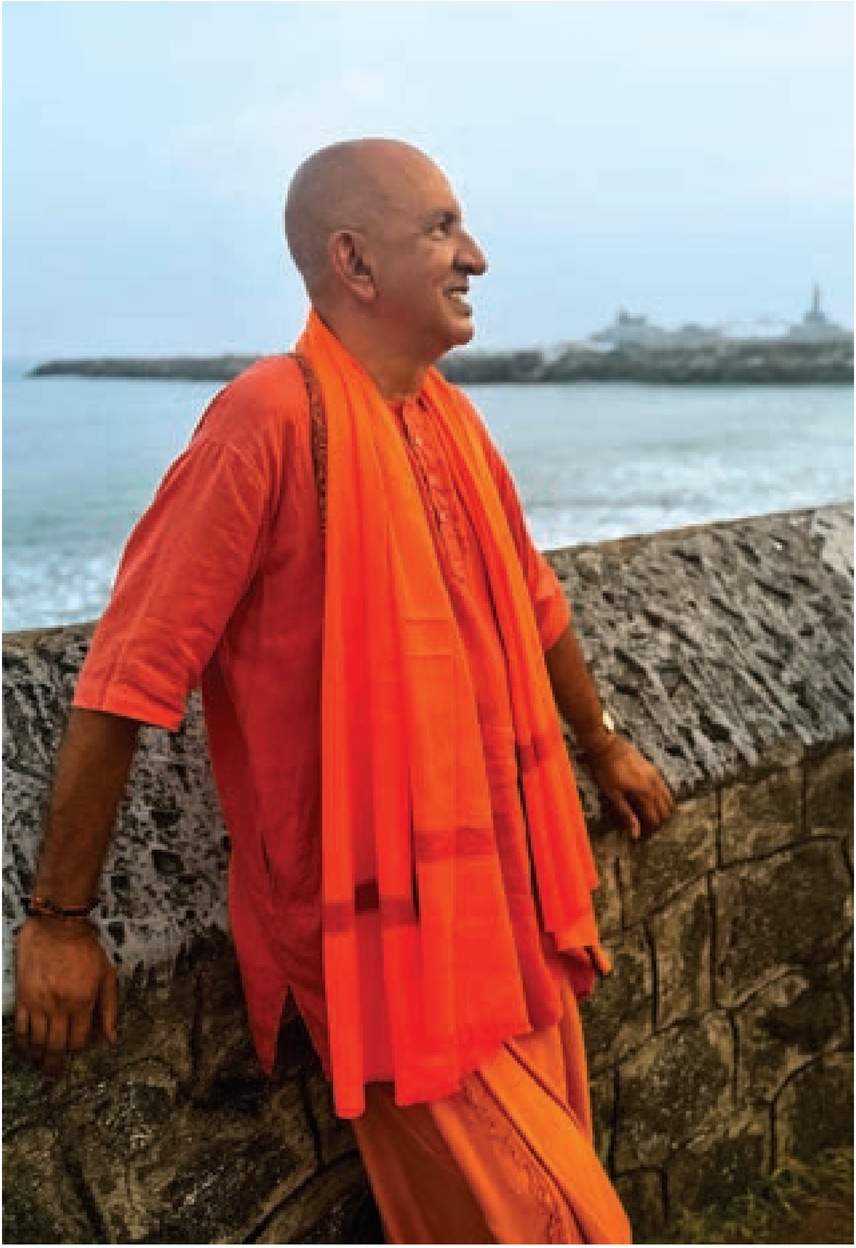

है कि आपकी परेशानी का कारण आर्थिक तंगी हो, दूसरे व्यक्ति के लिए पारिवारिक समस्याएँ हों, तीसरे व्यक्ति के लिए पेशेवर संघर्ष हों, चौथे व्यक्ति के लिए कोई बीमारी हो। इस समय मौजूद परेशानी का कारण हर किसी के लिए अलग-अलग है। यहाँ सत्संग में चालीस लोग बैठे हैं, और हर किसी की परेशानी का कारण अलग होगा।

मन की तरंगें

अशांति क्या है? जब मन किसी बाहरी विक्षेप के कारण स्थिर नहीं होता तो वह अशांति या अस्थिरता की अवस्था है। जब कोई विक्षेप नहीं होता तो मन शांत हो जाता है और स्थिरता, सामंजस्य, संतुलन का अनुभव करता है – ये सभी मिलकर शांतता की अवस्था का निर्माण करते हैं।

कल्पना कीजिए कि स्वच्छ पानी की एक सुंदर झील है। जब हवा नहीं चलती तो पानी की सतह स्थिर होती है और सब कुछ उसमें प्रतिबिंबित होता है – नीला आसमान, सफेद बादल, उड़ते पक्षी, पहाड़, पेड़ आदि। शांत अवस्था में सब कुछ पानी में स्पष्ट दिखायी देता है। अगर जरा-सी भी हवा चलती है तो पानी की सतह हिलने लगती है। हो सकता है कि कोई लहर न उठे, पानी में केवल हल्का-सा कंपन हो, फिर भी वह स्पष्टता को विकृत कर देगी और आप उसमें प्रतिबिंब नहीं देख पायेंगे।

लहर का उठना तो बहुत बाद में आता है। अगर आप विक्षोभ के पैमाने पर शून्य से सौ प्रतिशत की ओर बढ़ते हैं, तो शुरुआत में लहर भी नहीं होती, बस एक हल्का-सा धक्का होता है जो निष्क्रियता को तोड़ता है। वह धक्का पहले एक प्रतिशत होता है, जो धीरे-धीरे बढ़कर कंपन, फिर छोटी तरंगें, फिर बड़ी लहरें बनते जाता है। जब तक वह लहर का रूप लेता है, तब तक शुरुआती एक प्रतिशत विक्षोभ सत्तर से अस्सी प्रतिशत हो चुका होता है। इसलिए, आपको लहर उठने का इंतजार नहीं करना चाहिए। जब वह लहर बन जाती है तो इसका मतलब है – बहुत देर हो चुकी है।

कई बार ऐसा होता है कि ध्यान के दौरान लोगों के मन में इतना बड़ा तूफान उठता है कि वे और बैठ नहीं पाते। आप ही हैं जो इस तूफान को आने देते हैं, क्योंकि आपने बहुत देर तक इंतजार किया। एक छोटी-सी लहर एक बड़े तूफान में बदल गई। इसलिए आपको लगातार उस चीज पर ध्यान देना होगा जो आपको परेशान कर रही है।

हर शाम आत्म-निरीक्षण की साधना करें, ताकि आप विक्षेप के कारणों को पहचान कर दूर कर सकें। जो पहचाना नहीं गया है, उसे आप नहीं जानते, और जब भी वह सामने आएगा, उससे निपटना होगा, लेकिन कम-से-कम पहचाने जा सकने वाले कारणों को दूर करें। उन परिस्थितियों को प्रबंधित और व्यवस्थित करने का प्रयास करें जिन्हें आप देख सकते हैं।

बाधाओं के बारे में गीत

स्वामी शिवानंद जी द्वारा बताये गये आध्यात्मिक मार्ग में साधकों को बाधाओं और सीमाओं के प्रति सजग रहने पर जोर दिया गया है। आज तक कई ऐसे साधु, संन्यासी और विचारक हुए हैं जो विद्वान् रहे हैं, जिन्होंने बहुत-सी पुस्तकें लिखी हैं। लेकिन हर पुस्तक, साहित्य और शास्त्र को पढ़ने के बाद मैंने पाया कि किसी भी साधु ने उन बाधाओं की चर्चा नहीं की है जिनसे आपको सावधान रहना है। सब कहते हैं कि यह करो, वह बनो, मीठा बोलो, सच बोलो, सबके सामने दंडवत् प्रणाम करो, विनम्र बनो – लोगों ने इस तरह की बातें तो कही हैं, लेकिन किसी ने यह नहीं कहा, 'मार्ग में आने वाली बाधाओं को देखो और सावधानी से उन्हें पार करो।'

हमारे परमगुरु, स्वामी शिवानंद जी पहले संन्यासी थे जिन्होंने उपलब्धियों के बजाय बाधाओं को उजागर किया। उनके 'बाधाओं पर गीत' में इन बाधाओं का स्पष्ट वर्णन है। वे कहा करते थे कि जब आप इन बाधाओं के चंगुल में आ जाते हैं तो आपका दृष्टिकोण पूरी तरह से संकीर्ण हो सकता है। शांति प्राप्त करने से पहले अपने अहंकार, राग-द्वेष और अभिनिवेश को संभालें। वे जानते थे कि मन में व्याकुलता और विक्षेप की स्थिति हमेशा बनी रहती है, इनसे कोई भी मुक्त नहीं है। इसलिए वे कहते थे, 'अगर आप चाहते हैं कि भगवान आपके घर में प्रवेश करें, तो पहले झाड़ू लगाएँ, फिर गंदगी हटाएँ, घर को व्यवस्थित करें, सजाएँ और फिर द्वार खुले रखें। भगवान अवश्य आएँगे।' इस प्रकार, उन्होंने आध्यात्मिक यात्रा को एक व्यावहारिक रूप दिया।

स्वामी शिवानंद जी प्रतिपक्ष भावना पर जोर देने वाले पहले साधु भी थे। उन्होंने बार-बार कहा है कि आपको नकारात्मक को सकारात्मक में बदलते रहना चाहिए। इस विधि से आपको अपने मन को दृढ़ बनाते रहना चाहिए। उन्होंने बाधाओं और उन पर विजय पाने के उपायों को बहुत सुंदर ढंग से समझाया है।

आँखें खोलकर देखो

आपका मन केवल राग और द्वेष की अभिव्यक्ति है। एक अवस्था राग है और दूसरी अवस्था द्वेष; इसके अलावा कोई और तीसरी अवस्था नहीं है जिसका आप अनुभव करते हैं। आपको बताया गया है कि ध्यान के अभ्यास में द्रष्टा बनें। उस समय आप आँखें बंद करके स्वयं का अवलोकन करते हैं, लेकिन आपको आँखें खोलकर भी स्वयं का अवलोकन करना सीखना होगा। यह तीसरी अवस्था है, और इसे केवल कक्षा में चर्चा का विषय नहीं रहना चाहिए, बल्कि व्यवहार में लागू किया जाना चाहिए। यह क्षमता आत्म-अवलोकन से आती है।

अपने अंदर क्या हो रहा है, आपको उसे देखना और समझना होगा, यह पहचानना होगा कि आप इसे कैसे सुधार सकते हैं और फिर उस सुधार को अभिव्यक्त करना होगा। अशांति और विक्षेप का कारण चाहे जो भी हो, आपको उसे देखने और फिर उससे खुद को अलग करने में सक्षम होना होगा। जब आप शाम को अपने कमरे में बैठकर यह प्रक्रिया करते हैं तो यह केवल एक शुरुआत है; अंततः यह प्रक्रिया चौबीस घंटे चलनी है। यह रात को सोने से पहले केवल पंद्रह मिनट करने वाली चीज नहीं है, बल्कि यह एक ऐसी अवस्था है जिसे मन को राग और द्वेष से मुक्त करके विकसित करना है।

राग और द्वेष ही मन में विक्षेप और व्याकुलता पैदा कर उसे स्थिर और शांत नहीं होने देते। ये अचेतन असुरक्षा, भय और आशंका को उजागर करते हैं, जो आगे चलकर अशांति का कारण बनते हैं। इसलिए, जैसे आप सुबह आसन और प्राणायाम के अभ्यास में शारीरिक गतिशीलता और ऊर्जा पर ध्यान केंद्रित करते हैं, वैसे ही शाम के अभ्यास में मन की स्थिति पर ध्यान केंद्रित करें और सोने से पहले उसे शांत अवस्था में ले आएँ। दिनभर में आपने जो भी व्याकुलता और अशांति का अनुभव किया है, उसे रात में देखें और दूर करें, ताकि आप एक बेहतर अगले दिन के लिए खुद को तैयार कर सकें।

पथ पर चलते रहो

यदि आप जीवनशैली के यम-नियमों का ठीक से पालन करते हैं, तो आप पायेंगे कि आप कई सीमाओं को पार कर सकते हैं और पथ पर प्रगति कर सकते हैं। चार साल पहले यह यात्रा मनःप्रसाद और जप के साथ शुरू हुई थी। इस अवधि के दौरान इन दोनों को अपने जीवन में उतारने का प्रयास करने के बाद आप कह सकते हैं, 'हाँ, मैं चार कदम आगे बढ़ गया हूँ। मेरे जीवन में अधिक आनन्द है, मैं जप के अभ्यास से दु:ख के कारणों से अधिक आसानी से अलग हो पा रहा हूँ। पहले स्वयं को देखना कठिन था, अब यह थोड़ा आसान हो गया है। इसी तरह अन्य यम-नियमों ने मुझे स्वयं को बेहतर ढंग से देखने में सक्षम बनाया है। मैं न केवल उनके व्यावहारिक प्रयोग को समझ पा रहा हूँ, बल्कि मैं किसी यम या नियम के अनुभव की अवधि भी बढ़ा पा रहा हूँ। यदि पाँच साल पहले मुझे बीस मिनट के लिए प्रसन्नता का अनुभव होता था, तो अब यह अधिक समय तक रहता है।'

इस प्रकार, आपको धीरे-धीरे प्रयास करना होगा। इन बातों को सिर्फ सत्संग में सुनना नहीं, बल्कि जीवन में उतारने का प्रयास करना होगा। अंततः यम-नियमों का अभ्यास करके आप शांतता का अनुभव करना शुरू कर सकते हैं।

स्वामीजी, क्या प्रेम ही शांति का मार्ग नहीं है?

हाँ, कई बार जब प्रेम होता है, तो शांति का अनुभव होता है। जब एकता की भावना होती है, तो शांति की अनुभूति भी होती है, क्योंकि संतोष का भाव रहता है।

संतोष से बड़कर कोई शांति नहीं है। अगर आप संतुष्ट हैं, तो आपको किसी चीज की जरूरत नहीं है, आप पूर्ण हो जाते हैं। शांति के कई स्तर होते हैं। शांति का अंतिम स्तर संतोष है, और शांति की शुरुआत, उसका पहला कदम सजगता है। सौ प्रतिशत शांति संतोष है और पहला प्रतिशत है उसकी सजगता, इसके बीच विचारों, भावनाओं, इंद्रियों, प्राणों की सुव्यवस्था और सुधार आता है। सुधार की इस प्रक्रिया को साधना कहा जाता है यानि सचेत प्रयास। जब आप इस प्रक्रिया से गुजरते हैं तो जो भी भावना प्रमुख होती है, शांति उसी भावना का रूप ले लेती है।

रामचरितमानस में एक प्रसंग है जब श्रीराम महाराज जनक के दरबार में प्रवेश करते हैं। उपस्थित माताओं ने उन्हें अपने पुत्र के रूप में देखा और संतोष महसूस किया। योगियों ने उन्हें प्रकाश के रूप में देखा और उससे तुष्ट हो गये। राक्षसों ने उन्हें अपने संहारक के रूप में देखा। यह दर्शाता है कि आपकी ग्रहणशीलता आपके मन की स्थिति के अनुसार होगी, चाहे वह सकारात्मक हो या नकारात्मक।

यदि मन में तमोगुण प्रबल है तो आप राम को अपने काल के रूप में देखेंगे। यदि रजोगुण प्रबल है तो आप उन्हें अपने पुत्र या पति के रूप में देखेंगे। यदि सत्त्वगुण प्रबल है तो आप उन्हें प्रकाश या अपने इष्ट के रूप में देखेंगे। हर अवस्था में प्रेम होता है, यहाँ तक कि तमोगुण में भी यह शांति ला सकता है। यह एक व्यक्तिगत अनुभव है – 'मुझे खुशी है कि मैंने उन्हें देखा, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वे मेरी मृत्यु का कारण बनेंगे, मैं फिर भी धन्य हूँ।'

जब सुख या दु:ख अपने चरम पर पहुँचते हैं, तो एक खास मानसिक स्थिति बनती है जिसके परिणामस्वरूप शारीरिक प्रतिक्रिया होती है। आप सुख और दु:ख, दोनों में आँसू बहाते हैं, यानी आँसू उत्पन्न होने की प्रक्रिया एक ही है। फर्क सिर्फ इतना है कि दु:ख में निकले आँसू आपको सकारात्मक भावनाओं से अलग कर देते हैं और आपकी भावनाओं को कठोर बना देते हैं, जबकि खुशी के आँसू आपको दूसरों से जोड़ते हैं, ये गोंद की तरह काम करते हैं। दु:ख में अलगाव होता है और खुशी में जुड़ाव, फिर भी उनके उत्पन्न होने की प्रक्रिया समान है।

– 19 जुलाई 2018, गंगा दर्शन

भगवद्-भक्ति

स्वामी सत्यानन्द सरस्वती

हम लोग ईश्वर-लीला की महत्ता को कम न समझें। यह सृष्टि उस ईश्वर की है जो बहुत ही नटखट है। उसके बारे में जो भी कहो, जैसा भी कहो, वह असत्य नहीं है, किन्तु समग्र भी नहीं। भगवान के बारे में जो भी बोलो, वह गलत नहीं, मगर काफी भी नहीं है। अन्त में 'नेति-नेति' कहना पड़ेगा। भगवान का रूप होता है और वह भगवान निराकार भी है।

मिट्टी का रूप क्या होता है? दिया, सकोरा, घड़ा, खिलौना – मिट्टी का अपना कोई रूप नहीं है, जिस रूप में बना दो, वही उसका रूप है। सोने का क्या रूप है? हार या कँगन सोने का रूप नहीं है, तुमने उस आकृति को एक नाम दिया, मगर वह सोने का रूप तो नहीं। सोना रूप रहित है, मिट्टी रूप रहित है। वैसे ही परमात्मा रूप रहित है, मगर उसे किसी ने कृष्णजी बना दिया, किसी ने रामजी बना दिया, वही उनका रूप है। रामचरितमानस में शंकरजी ने पार्वती से कहा है कि भक्तों के प्रेमवश भगवान विभिन्न सगुण रूप धारण किया करते हैं।

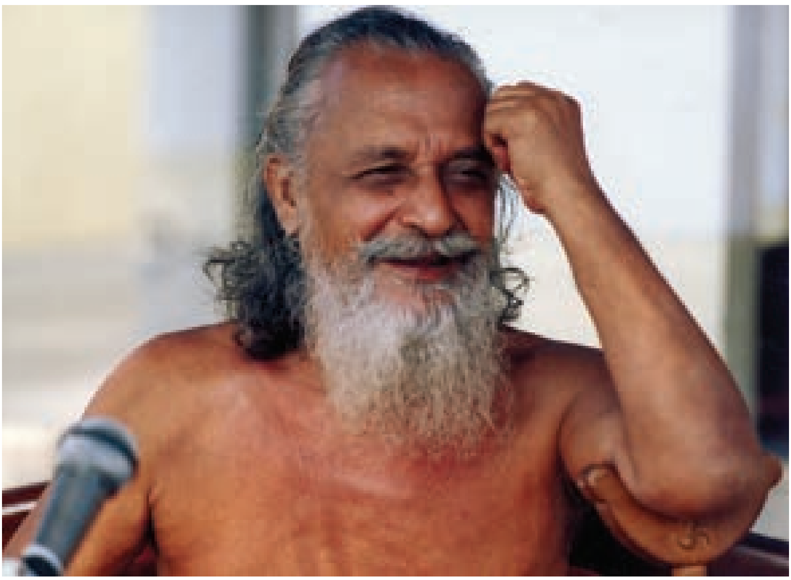

सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा। गावहिं मुनि पुरान बुध वेदा॥
अगुन अरूप अलख अज सोई। भगत प्रेम बस सगुन सो होई॥
जो गुन रहित सगुन सोई कैसे। जल हिम उपल विलग नहीं तैसे॥

किसी ने भगवान को योगी के रूप में देखा, किसी ने बावले के रूप में देखा, किसी ने उनको शादी करते हुए देखा, किसी ने भूत-पिशाच की तरह देखा, गाँजा पीकर मस्त पड़े देखा। परमात्मा के सभी रूप होते हैं। उनको तुम सब रूपों में देखो। तुम उन्हें देवी के रूप में देखो, भयंकर, वीभत्स, सुन्दर, साधु, बालमुकुन्द के रूप में देखो, धनुर्धारी राम, वंशीधर कृष्ण के रूप में देखो, किसी भी रूप में देख सकते हो। भगवान को जिस रूप में तुम देखना चाहो, उस रूप में उनकी उपासना करो और वही रूप प्रकट होगा। इसीलिए रामचरितमानस में तुलसीदासजी कहते हैं –

जिन्ह के रही भावना जैसी। प्रभु मूरति तिन्ह देखी तैसी॥

कुछ लोग कह सकते हैं कि यह काल्पनिक है, पर आखिर कल्पना क्या है? संसार में कोई भी चीज कल्पना नहीं है, हर एक चीज सत्य है। हम तो अपने अनुभव से थोड़ा-बहुत बोलते हैं, अभी हमें पूरा अनुभव तो नहीं हुआ है, लेकिन हमें ऐसा लगता है कि भगवान तो अपने दोस्त हैं, सखा हैं, जो हमेशा अपना हित करते हैं, मगर हम ही उनको भूल जाते हैं। स्वामी शिवानन्द जी महात्मा बिन्दु जी का एक भजन गाया करते थे –

जीवन का मैने सौंप दिया, सब भार तुम्हारे हाथों में।
उद्धार पतन अब मेरा है, सरकार तुम्हारे हाथों में॥
हम तुमको कभी नहीं भजते, तुम हमको कभी नहीं तजते।
अपकार हमारे हाथों में, उपकार तुम्हारे हाथों में॥
हममें तुममें है भेद यही, हम नर हैं तुम नारायण हो।
हम हैं संसार के हाथों में, संसार तुम्हारे हाथों में॥
दृग बिन्दु बनाया करते हैं, इक सेतु विरह के सागर में।
मझधार हमारे हाथों में, पतवार तुम्हारे हाथों में॥

भगवान हैं और हमेशा सखा की तरह अपने साथ रहते हैं। स्वामी शिवानन्द जी कहते थे कि भगवान श्वासों के श्वास हैं, प्राणों के प्राण हैं, जीवन

की जीवनी शक्ति हैं और वे ही हमारी एकमात्र वास्तविकता हैं। संसार में यही एक सत्य है। करनेवाला भी वही है, करानेवाला भी वही है।

कुछ लोग जीवन की असफलताओं के कारण भगवान को दोषी ठहराते हैं। वे अपने आपको संकीर्णता के कारण पृथक् किये रहते हैं और बिजली का करेंट प्रवाहित ही नहीं हो पाता। माया की वजह से पृथक् रहते हैं। पृथकता के आधार माया को हटा दो, तो भगवान की विद्युत धारा प्रवाहित होने लगेगी। इस प्रकार धीरे-धीरे भगवत्-प्रेम प्रगाढ़ और गहरा होता जाता है। जिस तरह एक आशिक अपनी माशूका को सब तरफ देखता है, सब जगह उसको वही दिखाई देती है, वैसे ही एक भक्त भगवान को सब जगह देखता है। मुझमें, तुझमें, सब लोगों में।

लाली मेरे लाल की, जित देखौं तित लाल।
लाली देखन मैं गई, मैं भी हो गई लाल॥

जहाँ देखो वहाँ राम – जीवन का असली उद्देश्य भी यही है। जीवन में बाकी सब तो करना पड़ता है। पढ़ना पड़ता है, नौकरी करनी पड़ती है, इच्छाओं को पूरा करना पड़ता है, लेखा-जोखा पूरा करना पड़ता है। भगवान की इच्छा करनेवाले व्यक्ति को यह सब सोचना चाहिए। यह नहीं कि भगवान को प्राप्त करने के लिए घर-परिवार छोड़ दिया जाए, बल्कि विचार करना चाहिए कि भगवान क्या है और यह विचार मन में प्रश्न की तरह सदा चलना चाहिए कि किस प्रकार उनके साथ सम्बन्ध स्थापित हो। अगर 'मैं' 'वह' हूँ, तो उसे कैसे जानें?

अगर मैं भगवान का अंश हूँ, तो वह अनुभव मुझे क्यों नहीं हो रहा है? अनुभव कैसे होगा? हम लोग भूल चुके हैं कि हम भगवान के अंश हैं। जैसे सिर में चोट लगने से आदमी सब भूल जाता है, अपने माँ-बाप के नाम का भी उसे पता नहीं रहता, ऐसे ही हम भी भूल गये हैं, विस्मृति हो गयी है। यह जीवन का सार है। नौकरी वगैरह जीवन का सार नहीं है। 20-25 साल तक नौकरी है, फिर एक दिन जायेगी। यह तो केवल अहंकार का खेल है, जिसमें हम लोग पड़े रहते हैं। जैसे सूअर को विष्ठा खाने में मजा आता है, वैसे अपने को चक्कर खाने में मजा आता है। यह मत सोचो कि निन्दा कर रहा हूँ, क्योंकि संसार में तो सबको रहना है। संसार कीचड़ है, कमल की तरह रहना हो तो कमल बनो। कमल भी तो कीचड़ में ही पैदा होता है न?

जोंक बनना है तो जोंक बनो और कमल बनना है, तो कमल बनो। लेकिन कीचड़ में ही रहना है।

अगर भगवान सबसे प्रेम करते हैं, तो फिर पीड़ा क्यों होती है?

मेरी माँ मुझसे प्यार करती है, पर मेरे शरीर में यदि घाव हो जाए तो वही उसका ऑपरेशन भी कराती है। ऑपरेशन के समय जब मैं रोऊँगा और मुझे पीड़ा होगी तो क्या कहोगे कि माँ निर्दयी है? माँ ही तो ऑपरेशन करवा रही है। तुलसीदास जी कहते हैं –

जदपि प्रथम दुःख पावइ रोवइ बाल अधीर।
व्याधि नास हित जननी गनति न सो सिसु पीर॥
तिमि रघुपति निज दास कर हरहिं मान हित लागि।
तुलसीदास ऐसे प्रभुहि कस न भजहु भ्रम त्यागि॥

नारदजी की कथा जानते हो न? वे विवाह करना चाहते थे, पर भगवान ने उन्हें बन्दर का चेहरा दे दिया। उनका विवाह नहीं हो सका। जब श्रीराम वन में सीता जी को खोजते फिर रहे थे तो नारदजी वहाँ पहुँचे। उन्होंने भगवान से पूछा कि आप ने मेरा विवाह क्यों नहीं होने दिया। तो भगवान ने क्या उत्तर दिया?

तब विवाह मैं चाहउँ कीन्हा। प्रभु केहि कारन करै न दीन्हा॥
सुनु मुनि तोहि कहउँ सहरोसा। भजहिं जे मोहि तजि सकल भरोसा॥
करउँ सदा तिन्ह कै रखवारी। जिमि बालक राखई महतारी॥
गह सिसु बच्छ अनल अहि धाई। तहँ राखइ जननी अरगाइ॥
प्रौढ़ भये तेहि सुत पर माता। प्रीत करई नहिं पाछिल बाता॥
मोरे प्रौढ़ तनय सम ग्यानी। बालक सुत सम दास अमानी॥

भगवान तो माँ की तरह अपने अमानी दास की रक्षा करते हैं। पीड़ा आखिर है क्या? पीड़ा एक तरह से अनुग्रह है। प्रत्येक पीड़ा एक दूसरे रूप में अनुग्रह ही है। हम हमेशा पीड़ा से भागते हैं, उसे नहीं चाहते हैं, लेकिन पीड़ा एक शुद्धि की प्रक्रिया है, बुरे कर्मों का नाश है, जैसे तुम शरीर के किसी सड़े हुए अँग को काट देते हो। मनुष्य पीड़ा नहीं चाहता है, इसीलिए वह पीड़ा से दुःखी होता है। जो पीड़ा में ही आनन्द लेते हैं, वे पीड़ा आने पर खुश होते हैं। पीड़ा और दुःख एक ऐसी भट्ठी है, जिसमें प्रकृति मनुष्य को तब डालती है जब वह उसे एक महान् पुरुष बनाना चाहती है। जो पीड़ा सह लेते हैं, वे पुरुषोत्तम हो जाते हैं। ईसा मसीह को कितना कष्ट हुआ था, महात्मा गाँधी को कितना दुःख हुआ, राम जी ने कितना दुःख भोगा था। इसलिए जिस आदमी को किसी प्रकार का दुःख होता है उसे बराबर सोचना चाहिए कि भगवान उसे जगा रहे हैं। जब हम परमात्मा को याद करते हैं, दुःख को उसकी कृपा मानते हैं, तो वही हमें दुःख सहने की शक्ति भी देता है।

नियमितता का अभ्यास

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

जीवनशैली के नियमों में अंतिम नियम है नियमिता। नियमितता का अर्थ है नियमों का पालन, सिर्फ एक बार नहीं, बल्कि हमेशा। नियमों का पालन जीवन में एक स्वाभाविक अभिव्यक्ति होनी चाहिए, न कि थोपी हुई, तभी इसे नियमितता कहते हैं। अगर यह एक थोपी हुई स्थिति है कि आज मुझे सच बोलना है या यह करना है या वह करना है, तो यह नियमितता नहीं है।

मन की एक अवस्था

आप भले ही स्कूल जाते होंगे, लेकिन यह जरूरी नहीं कि वहाँ जाकर पढ़ाई ही करते हों। हो सकता है कि आप घर पर कहें कि आप स्कूल जा रहे हैं और इसे कहीं और जाने का बहाना बना लें। किसी नियम का जबरदस्ती पालन करना या उसे दिल से मानना, ये दो अलग-अलग बातें हैं। जब आप किसी नियम का सही दृष्टिकोण के साथ दिल से पालन करते हैं तो वह नियमितता में बदल जाता है। इस प्रक्रिया को नहीं, बल्कि इसके परिणाम को नियमितता कहते हैं।

मैंने अक्सर एक उदाहरण दिया है। जब मैं छोटा था तो मुझे नींद की समस्या थी – मैं बस सोते ही रहता था। मैंने इस आदत को बदलने के लिए हर दिन अपनी नींद के घंटे पाँच मिनट कम करने शुरू किये। यह प्रक्रिया नियमितता नहीं है, लेकिन जब मैं उस स्थिति तक पहुँच गया जहाँ चार बजे उठना एक स्वाभाविक आदत बन गई, वह नियमितता है। जब आप एक प्रक्रिया से गुजरते हैं और किसी चीज में निपुणता हासिल कर लेते हैं और वह आपकी दिनचर्या का अभिन्न अंग बन जाती है तो उसे नियमितता कहते हैं।

इस प्रक्रिया से गुजरते हुए आप कभी सफल होते हैं और कभी नहीं भी। हो सकता है कि आप एक दिन सुबह 4 बजे उठें और दूसरे दिन थकान के कारण 4.30 बजे। तब आपको फिर से अपने भीतर देखना होगा कि आप कैसे सुधार कर सकते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान आप एक कदम आगे बढ़ेंगे, एक कदम पीछे हटेंगे, फिर एक कदम आगे बढ़ेंगे, आधा कदम पीछे हटेंगे। आप 'दीर्घकाल-नैरंतर्य-सत्कार' के आदर्शानुसार हर दिन लंबे समय तक

श्रद्धापूर्वक ऐसा कर सकते हैं, लेकिन यह नियमितता नहीं है। यह नियमितता तभी बनती है जब आप उस अवस्था को प्राप्त कर लेते हैं और उसे स्वाभाविक एवं सहज तरीके से जीने में सक्षम हो जाते हैं। यह मन की एक अवस्था है, मन की सनक नहीं।

शुरुआत में किसी नियम का पालन इच्छाओं पर आधारित होता है – अगर आपका मन करे तो आप उसका पालन करते हैं, अगर आपका मन न करे तो आप उसका पालन न करने के सौ कारण सोच लेते हैं। नियमितता कोई मनमौजी प्रयोग नहीं है। यह एक परिवर्तित स्वभाव पर आधारित प्रयोग है। मनमौजी प्रयोग थोपा जाता है, स्वभाव-आधारित प्रयोग सहज और स्वतःस्फूर्त होता है। जब आप स्वाभाविक रूप से नियमों का पालन करने में सक्षम होते हैं तो उसे नियमितता कहा जा सकता है।

नियम का अर्थ है उचित आचरण का पालन करना; जो अनुचित है वह नियम नहीं हो सकता। अनुपयुक्तता नियम में बाधा है। जो सही है और आपके विकास के लिए अनुकूल है, वह नियम है। इसलिए, नियमितता को इच्छा, कामना या सनक से न जोड़ें – 'मैं यह करना चाहता हूँ'। इसके बजाय, इसे अपने स्वभाव से जोड़ें – 'मैं एक निश्चित स्वभाव विकसित करने का प्रयास कर रहा हूँ'। जब आप उस स्वभाव में स्थित हो जाते हैं तो आप नियमितता का अनुभव करते हैं। फिर आप उस स्वभाव के अनुसार एक सहज अभिव्यक्ति के रूप में सोचते, व्यवहार करते और जीते हैं। सामान्य रूप से नियमितता के लिए एक सूत्र उद्धृत किया जाता है – *स तु दीर्घकाल-नैरन्तर्य-सत्कारासेवितोदृढभूमिः*, लेकिन मैं इससे सहमत नहीं। नैरन्तर्य यानी किसी चीज को नियमित रूप से करना प्रयास है, और दीर्घकाल यह दर्शाता है कि आप लंबे समय से प्रयास कर रहे हैं। सत्कार वह सकारात्मक भाव है जो आपके मन में प्रयास करते समय आता है। नियमितता अर्जित करने के लिए ये सब आवश्यक हैं, लेकिन ये नियमितता नहीं हैं।

नियमितता के पहलू

1. दिनचर्या

नियमितता को समझने के लिए आपको इसे विभिन्न दृष्टिकोणों से देखना होगा। सबसे पहले है आपकी व्यक्तिगत और सामाजिक दिनचर्या, उसे उचित और उपयुक्त बनाना होगा। आप अपने जीवन में एक उचित व्यवस्था कैसे

बना सकते हैं ताकि आप तनाव और संघर्ष की स्थितियों से ऊपर उठकर शांति, संतुलन और आनंद की अवस्था प्राप्त कर सकें? जब तक आप इस दृष्टिकोण को विकसित नहीं करेंगे, तब तक आप अपने जीवन में नियमितता नहीं ला पाएँगे। इस समझ के बिना आपके जीवन में नियमितता का कोई प्रयोजन नहीं होगा। इसलिए, जब आप एक दिनचर्या शुरू करते हैं तो आपको यह देखना होगा कि आपके जीवन के सभी घटक – शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक, आध्यात्मिक, सामाजिक, व्यक्तिगत और पारिवारिक – एक-दूसरे के सहायक हों। इसी विचार को ध्यान में रखते हुए अपने लिए एक दिनचर्या बनाइये।

हम यह नहीं कहते कि आपको केवल अमुक समय पर ही जागना है। हर किसी का सोने और जागने का समय निजी परिस्थितियों के अनुसार अलग-अलग होता है। हमारा इतना ही कहना है कि आप चाहे जिस भी समय उठें, अपनी दिनचर्या में एक साधना अवश्य शामिल करें – तीन मंत्रों की साधना। स्नान आदि के बाद एक और साधना को अपनी दिनचर्या का हिस्सा बनाएँ – आसन और प्राणायाम। शाम को घर लौटने पर तीसरी साधना को भी शामिल करें – योग निद्रा। दिशानिर्देश दिए गए हैं, लेकिन आपको अपनी दिनचर्या को अपनी परिस्थिति के अनुसार प्रबंधित करना होगा। अपनी सुबह की साधना, अपना ध्यान, मंत्र जप, स्वाध्याय, कीर्तन, आसन,

प्राणायाम, योग निद्रा, आत्म-विश्लेषण अवश्य करें। इन सबको शामिल करने से आपका भौतिकवादी जीवन संतुलित हो जाएगा और आप अधिक शांति एवं आनंद का अनुभव करेंगे।

अगर आप अपनी बाहरी दिनचर्या को व्यवस्थित कर पाते हैं तो यह आपके मन का प्रतिबिंब है। आपका कमरा भी आपके मन का प्रतिबिंब है। चाहे वह साफ-सुथरा और व्यवस्थित हो या गंदा और बिखरे सामान से भरा, आपका मन भी बिल्कुल वैसा ही है। इसलिए अगर आप अपनी बाहरी दिनचर्या तय कर पाते हैं तो आप अपने मन को काफी हद तक नियंत्रित कर पाएँगे। आप जानते हैं कि आपकी अपनी दिनचर्या क्या है। अगर आप सबेरे 8 बजे नाश्ता, दोपहर का भोजन 1 बजे और रात का खाना 8 बजे लेते हैं तो इसमें कोई बुराई नहीं है। आदर्श क्या है, यह अलग बात है, लेकिन अगर आपका सामाजिक परिवेश आपको इस समय-सारिणी का पालन करने के लिए मजबूर कर रहा है तो आपको इसे स्वीकार करना होगा। इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि एक बार आप इन सभी गतिविधियों के लिए समय तय कर लेते हैं तो आपको उसका नियमित रूप से पालन करना चाहिए। जब आप एक निश्चित समय-सारिणी का पालन करते हैं, तो एक शारीरिक अनुकूलता, एक शारीरिक आदत विकसित होती है।

जब आप आश्रम आते हैं तो आपको एक निश्चित दिनचर्या का पालन करना होता है – अमुक समय पर नाश्ता और फिर दोपहर के भोजन तक कुछ नहीं, अमुक समय पर चाय और फिर रात के खाने तक कुछ नहीं। लोग सोचते हैं, 'अरे, हमें भूख लगेगी! हम इतने समय तक बिना कुछ खाए कैसे रह पाएँगे?' लेकिन एक बार आप इस दिनचर्या का पालन करना शुरू कर देते हैं तो शरीर स्वतः ही इससे जुड़ जाता है। आपको केवल 11.30 बजे भूख लगती है, शरीर की माँग होती है कि उसे उस समय भोजन मिले। घर पर आप दिनभर कुछ-न-कुछ चबाते रहते हैं और जब भोजन का समय होता है तो आपको भूख नहीं लगती। माँ अपने बच्चे से कहती है, 'बेटा, आकर खाना खा लो।' वह जवाब देता है, 'माँ, मुझे भूख नहीं है' क्योंकि उसने दस मिनट पहले मुँह में कुछ डाला है, एक घंटे पहले कुछ और खाया है। आपने ही उसे इसकी अनुमति दी है। आप उसे नियंत्रित नहीं कर पाए हैं क्योंकि आप स्वयं भी ऐसा ही करते हैं। आश्रम जीवनशैली की तरह उसकी आदतों को नियंत्रित करने का प्रयास करें। निश्चित समय पर नाश्ता और उसके बाद

उसे फ्रिज को हाथ नहीं लगाना है। निश्चित समय पर मेज पर बैठकर दोपहर का भोजन; उसे उसके कमरे में पिज्जा नहीं भेजा जाएगा।

आपके दादा-दादी ऐसा ही करते थे। आपको हर समय रसोई में जाने की अनुमति नहीं थी। जब भोजन का समय होता तो थाली परोस दी जाती और आपको खाना पड़ता। आप भोजन का अनादर नहीं कर सकते थे। ये संस्कार आपको जरूर मिले थे, फिर भी आपने इन्हें अपने बच्चों को नहीं दिया। इसके बजाय आपने उन्हें गलत दिशा में प्रोत्साहित किया – 'अभी पिज्जा खा लो, बाद में अपना खाना खा लेना।' 'आओ मैगी नूडल्स खा लो, बाद में चावल-दाल खा लेना।' आपने अपने बच्चों को संस्कारहीन बना दिया है। आपने उन्हें अनियमितता का पाठ पढ़ाया है। यदि आपने स्वयं अपने जीवन में नियमितता का पालन किया होता तो आपके बच्चे अनुशासन का विरोध नहीं करते, क्योंकि ये एक संस्कार, एक आदर्श आचरण बन गए होते। इसलिए पहली चीज यही कि आपको अपनी दिनचर्या को नियमित करना चाहिए। यदि भोजन का समय निश्चित है, तो वही रहे, उसमें कोई बदलाव न आये।

आपने श्री स्वामीजी के बारे में कहानियाँ सुनी होंगी। अगर दोपहर का भोजन 10.30 बजे होता था तो इसका मतलब 10.35 नहीं, 10.30 ही होता था। जब मैं अमेरिका से गंगा दर्शन लौटा था तो प्रशासनिक कामों में व्यस्त रहता था और अक्सर खाने के लिए देर हो जाती थी। जब उन्हें यह पता चला

तो उन्होंने मुझे रोजाना 10 बजकर 10 मिनट को अपने पास आने को कहा। तब उनका दोपहर का भोजन आ जाता और वे मुझे अपने साथ खाने के लिए कहते। बाद में उन्होंने मुझे समझाया कि शारीरिक स्वास्थ्य के लिए कुछ नियमों का पालन जरूरी है, और उनमें से एक है नियमित समय पर भोजन करना। अगर आप एक निश्चित समय पर भोजन करते हैं तो शरीर उसके पोषक तत्त्वों को ग्रहण कर लेता है, लेकिन अगर आप हर तरह की चीजें हर समय खाते हैं तो कोई नहीं कह सकता कि शरीर क्या ग्रहण करेगा और क्या त्यागेगा; सब अंदर ही अंदर खिचड़ी बन जाएगा।

इसी तरह रात को सोने और सुबह उठने का भी एक निश्चित समय होना चाहिए। अगर सोने का समय 8 बजे है, तो 8 बजे ही होना चाहिए; अगर उठने का समय 4 बजे है, तो 4 बजे ही होना चाहिए। अगर इन चीजों को सही कर दिया जाए तो ये आपके स्वभाव का हिस्सा बन जाती हैं।

2. काम-काज

यही सिद्धांत काम-काज पर भी लागू होना चाहिए, हरेक काम पर जो आप अपने हाथ में लेते हैं। भोजन के मामले में भी सिर्फ भोजन खाना ही मायने नहीं रखता, उसे बनाने की एक पूरी प्रक्रिया होती है। अगर आप शाम 6 बजे भोजन लेने का फैसला करते हैं और आपका खाना उस समय तक तैयार नहीं तो अपनी पत्नी पर चिल्लाने का कोई फायदा नहीं। घर के माहौल और खाना बनाने की प्रक्रिया को भी इस तरह व्यवस्थित करना होगा कि भोजन बिना किसी परेशानी के 5.45 तक तैयार हो जाए और आपकी पत्नी भी आपके साथ खाना खा सके। इन सबका प्रबंधन नियमितता का हिस्सा है।

आपको जीवन में एक व्यवस्था लागू करनी होगी। मनोयोग, एकाग्रता और समझ होनी चाहिए ताकि आप हर काम को सही तरीके से और सही समय पर पूरा कर सकें। ये सभी नियमितता के पहलू हैं।

3. रिश्ते

रिश्तों में भी नियमितता के सिद्धांत लागू होते हैं। आपको पता होना चाहिए कि कब क्या करना है – कब किसी से बात करनी है और कब किसी को अकेला छोड़ देना है। इन चीजों को देखने के अलग-अलग नजरिये होते हैं। जब मैं पश्चिम में रहता था तो अगर मुझे अकेले रहना होता, मैं एकांत में रहता

और लोग कहते, 'उसे अलग रहने दो। उसे एकांत चाहिए।' ऐसी वहाँ की संस्कृति है। यहाँ अगर लोग मुझे अकेला देखते हैं तो उन्हें लगता है कि यह उनका मौका है मुझे घेरने और अपनी समस्याएँ बताने का! आप उचित और अनुचित के सन्दर्भ में नहीं सोचते, बस खुद को संतुष्ट करने का मौका ढूँढ़ते हैं।

जब मैं पंचाग्नि साधना करता था तो उसका समापन पाशुपत अस्त्र यज्ञ के साथ होता था। दिनभर की साधना पूरी करने के बाद मैं शाम को यज्ञ में भाग लेने आता, और यज्ञ में भाग लेने आए सभी लोग मेरे चारों ओर इकट्ठा होने लगते। वे समझ नहीं पाते थे कि मैं एक विशेष मनोवस्था से बाहर आया हूँ और इस समय अपनी समस्याओं को लेकर मेरे पीछे पड़ना उचित नहीं है। उन्हें यज्ञ का साक्षी बनने के लिए बुलाया गया था, मुझसे मिलने के लिए नहीं। क्या इसे नियमितता, संयम, अनुशासन या सही व्यवहार कहा जाएगा? फिर भी, सभी लोग ऐसा करते हैं। इसलिए, रिश्तों और संबंधों में सजगता भी नियमितता का एक हिस्सा है।

रिश्तों में नियमितता तब आती है जब समझ विकसित और परिपक्व होती है। तभी कोई रिश्ता मजबूत और स्थिर बन पाता है। जब मन साफ होता है तो रिश्ते भी स्पष्ट होते हैं और अपेक्षाएँ उचित, संतुलित एवं सही सीमाओं में रहती हैं। यही नियमितता का प्रभाव और परिणाम है।

4. क्रियाओं में संयम

नियमितता का एक और पहलू यह है कि क्रियाओं में संयम होना चाहिए। उदाहरण के लिए, मोबाइल फोन। आजकल ज्यादातर बच्चे अपने फोन के बिना पाँच मिनट भी नहीं रह सकते। एक नई मनोवैज्ञानिक बीमारी सामने आयी है – 'क्या मेरे से कुछ छूट तो नहीं गया?' यह प्रवृत्ति है लगातार अपने मोबाइल पर फेसबुक, मैसेज, इंस्टाग्राम, ईमेल वगैरह देखने की। अब कल्पना कीजिए कि आप अपने लिए एक

छोटा-सा नियम बनाते हैं – आप अमुक समय से दो घंटे तक अपने फोन का इस्तेमाल नहीं करेंगे। यह इंद्रियों और क्रियाओं के संयम का संकेत है। क्रियाओं के संयम से आप व्यवहार, आचरण और स्वभाव में नियमितता विकसित करते हैं।

5. जीवनशैली

एक संतुलित जीवनशैली नियमितता का एक और पहलू है। शारीरिक और मानसिक श्रम के बीच संतुलन होना चाहिए। बहुत-से लोग दिनभर बहुत ज्यादा मानसिक श्रम करते हैं और शारीरिक गतिविधि बहुत कम करते हैं। अगर आप दुकान चलाते हैं तो आठ-दस घंटे दुकान में बैठे रहते हैं। अगर आप किसी दफ्तर में काम करते हैं तो आठ घंटे कुर्सी पर बैठे रहते हैं। घर लौटने पर आप कहते हैं कि आप थक गए हैं और सोफे पर बैठ जाते हैं। कुछ देर बाद भी आपकी थकान बरकरार रहती है और आप बिस्तर पर लेट जाते हैं। आपने सिर्फ मानसिक ऊर्जा का इस्तेमाल किया है, शारीरिक ऊर्जा का बिल्कुल भी इस्तेमाल नहीं किया है। फिर कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जो दिनभर शारीरिक श्रम करते हैं और मानसिक श्रम बहुत कम करते हैं।

स्वामी शिवानंद जी कहते थे कि ऐसा नहीं होना चाहिए। आप एक उद्योग या कारखाने की तरह हैं। कारखाने में अगर सिर्फ मजदूर ही काम करें और सुपरवाइज़र कुछ भी न देखे, तो वह कारखाना ठीक से नहीं चलेगा। आपके साथ भी कुछ ऐसा असंतुलन होता है। सुपरवाइज़र सारा काम करता है और मजदूर दिनभर बेकार बैठे रहते हैं। इसलिए, जब आप घर वापस आएँ तो मजदूरों को कुछ शारीरिक श्रम जरूर दें।

स्वामी शिवानंद जी और स्वामी सत्यानंद जी, दोनों ने कहा है कि आपके द्वारा किए जाने वाले मानसिक और शारीरिक काम की मात्रा को संतुलित होना चाहिए, तभी प्राण संतुलित हो पाते हैं। जब यह संतुलन नहीं रहता तो आप अपने शरीर या मन को नुकसान पहुँचा रहे होते हैं। आप अपने शरीर और मन में तनाव, दबाव और सुस्ती जैसी स्थितियों को आमंत्रित कर रहे हैं। शरीर और मन की पूरी औद्योगिक इकाई को नुकसान हो रहा है, क्योंकि कोई भी दूसरे के साथ सहयोग नहीं कर रहा है। सुपरवाइज़र एक दिशा में जा रहा है, कर्मचारी दूसरी दिशा में जा रहे हैं, और सी.ई.ओ. तीसरी दिशा में जा रहा है। कारखाने का मुख्य अधिकारी आपकी आत्मा है, लेकिन कोई

भी मुख्य अधिकारी की नहीं सुनता है। कारखाने में चार प्रबंधक हैं – मनस्, बुद्धि, चित्त और अहंकार, साथ ही दस कर्मचारी हैं – पाँच ज्ञानेंद्रियाँ और पाँच कर्मेंद्रियाँ। लेकिन कर्मचारी प्रबंधकों की नहीं सुनते हैं, प्रबंधक कर्मचारियों की नहीं सुनते और कोई भी सी.ई.ओ. की नहीं सुनता।

प्रतिदिन प्राण शक्ति और चित्त शक्ति, यानी शारीरिक ऊर्जा और मानसिक ऊर्जा के बीच संतुलन बनाना आवश्यक है। जब तक इन दोनों शक्तियों में सामंजस्य नहीं होगा तब तक आपका मन निर्मल और शांत नहीं होगा, और आप नियमितता का पालन नहीं कर पाएँगे।

प्राणों का संतुलन अद्भुत परिवर्तन ला सकता है। हमने भारत और पश्चिम, दोनों जगह देखा है कि ऐसे कई लोग, जो वर्षों से भौतिकवादी, सामाजिक रूप से सक्रिय और भोग-विलास का जीवन जी रहे हैं, जब योग का अभ्यास करना शुरू करते हैं, तो वे पार्टी, सामाजिक मेलजोल और भोग-विलास में रुचि खो देते हैं। कई बार वे कहते हैं, 'मेरे परिवार और दोस्त कह रहे हैं कि मैं बदल गया हूँ।' मैंने अक्सर सोचा है कि ऐसा क्यों होता है और इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि जैसे-जैसे प्राण संतुलित, संगठित और सामंजस्यपूर्ण होते जाते हैं, प्राणिक ऊर्जा का अपव्यय कम होते जाता है, भोग-विलास की प्रवृत्ति स्वाभाविक रूप से कम होती जाती है। लेकिन आपके प्राण अगर विक्षिप्त और अशांत हैं तो आप हमेशा भोग-विलास के पीछे भागते रहेंगे। यह उदाहरण दर्शाता है कि योगाभ्यास या यम-नियमों के पालन के बाद प्राणिक स्तर पर जो संतुलन स्थापित होता है, उससे शारीरिक और मानसिक स्तर पर सुधार होता है। यह नियमितता का प्रभाव है।

शुरुआत करें

जिस तरह शांतता की स्थिति तक पहुँचने के लिए आपको सभी यम-नियमों का पालन करना है, उसी तरह का प्रयास नियमितता के लिए भी करना होगा। आपको छोटी-छोटी चीजों से शुरुआत करनी होगी। छोटे-छोटे संकल्पों, अणुव्रतों की मदद से छोटी-छोटी आदतें बनानी होंगी। आपको यह प्रयास निरंतर करते रहना होगा, ताकि एक दिन आपको अपने प्रयास की सफलता का अनुभव हो। जिस दिन आपको प्रयास की सिद्धि का अनुभव होगा, नियमितता आपके जीवन का एक स्वाभाविक और अभिन्न अंग बन जाएगी।

– 20 जुलाई 2018, गंगा दर्शन

अनुपम अनुभव

मैट्स यूनिवर्सिटी (महावीर एकेडेमी ऑफ टेक्नॉलोजी एण्ड साइंसेस), रायपुर के कुछ शिक्षकों एवं विद्यार्थियों ने 23 से 26 मार्च तक गंगा दर्शन में प्रवास किया। उनके कुछ अनुभव यहाँ उद्धृत किये जा रहे हैं –

मुझे पहली बार आश्रम जीवनशैली को नजदीक से देखने, जीने व अनुभव करने का शुभ अवसर प्राप्त हुआ। किसी संन्यासी का जीवन कितना संघर्षमय होता है, यह अनुभव कर पाया, साथ ही उनकी दूरदर्शिता को भी महसूस कर पाया। हमलोगों को परमहंस स्वामी निरंजनानन्द जी के दर्शन भी हुए, जिनके बारे में हम अपने विश्वविद्यालय में पढ़ा करते थे और जिनका उदाहरण हम आज अपनी कक्षाओं में दिया करते हैं। उनके साक्षात् दर्शन से मन शांत व प्रेरित हुआ, और योग एवं वेदान्त की विद्या जानने की इच्छा अधिक बलवती हुई। यहाँ आने के बाद पारम्परिक योग के विभिन्न पहलुओं को भी गहराई से अनुभव करने का अवसर मिला। साथ ही नवरात्रि साधना में भाग लेना हम सभी का सौभाग्य रहा। सभी संन्यासियों और आश्रम सदस्यों में गुरु भक्ति तथा कर्म के प्रति पूर्ण निष्ठा ने मेरे मन-मस्तिष्क को अत्यधिक प्रभावित किया।

– डॉ. राघव कुमार

स्वामीजी के दर्शन हमारे लिए दुर्लभ हैं, हमने कल्पना भी नहीं की थी कि हमें स्वामीजी के दर्शन होंगे। लेकिन यह मेरे और मेरे सहपाठियों के लिए बहुत सौभाग्य की बात रही। स्वामीजी के सत्संग की बातें मेरे जीवन में हमेशा स्मरणीय रहेंगी। उन्होंने कहा कि जीवन में किसी चीज को अपनाना है तो सतत् जागरूकता आवश्यक है। साथ ही अभ्यास में श्रद्धा एवं निष्ठा का भाव भी होना चाहिए। स्वामीजी की सबसे अच्छी बात योग कैप्सूल की लगी जिसमें कम-से-कम अभ्यास से ज्यादा-से-ज्यादा फायदा मिलता है। चूँकि हम सब योग के विद्यार्थी हैं, योग कैप्सूल की जानकारी हमारे लिए बहुत उपयोगी है ताकि हम इन्हें अच्छे से समझ सकें और योग के विभिन्न आयामों को लोगों तक पहुँचा सकें।

यहाँ की दिनचर्या भी बहुत अच्छी लगी। अहसास हुआ कि हम गृहस्थ जीवन में रहकर कितनी लापरवाही करते हैं और यहाँ रहकर यह समझ में

आया कि मनुष्य को अपनी दिनचर्या कैसी रखनी चाहिए। सबेरे हठयोग और दोपहर में योगनिद्रा की कक्षाएँ भी बहुत उपयोगी रहीं। यहाँ आने से मेरा मन पूर्ण रूप से शांत एवं सकारात्मक हो गया है। अंत में मैं यही कहना चाहती हूँ कि मैं यहाँ से बहुत कुछ सीख कर जा रही हूँ।

– मोनिका भसगौरी

आश्रम में आने से मेरी जीवनशैली में बहुत कुछ परिवर्तन आया। सर्वप्रथम मेरी दिनचर्या में सुधार हुआ। सुबह जगने से लेकर रात के सोने तक का समय निर्धारित व अनुशासित बन गया। यहाँ का वातावरण, यहाँ के संन्यासियों का व्यवहार शांति, प्रेम और सज्जनता से भरा हुआ है। हम यहाँ आए तो शैक्षणिक भ्रमण के लिए थे, पर इन तीन दिनों में हम सब एक परिवार की तरह रहने लग गये। अगर दुबारा मौका मिला तो मैं यहाँ जरूर आना चाहूँगी।

– राधा साहू

मेरा आश्रम का अनुभव बहुत सुखद और आनन्ददायक रहा। आश्रम की सुन्दर हरियाली और इसकी पूरी क्रमबद्ध दिनचर्या सर्वथा उपयुक्त है। योग की विद्यार्थी होने के नाते मैंने स्वामीजी द्वारा लिखी अनेक पुस्तकें पढ़ी हैं, जो बहुत ही सरल और सुबोध ढंग से लिखी गयी हैं। हमें स्वामीजी के दर्शन और सत्संग का भी सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होंने हमारे दैनिक जीवन में योग के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए बतलाया कि किस प्रकार योग केवल आसनों का अभ्यास नहीं है, बल्कि हमारी जीवनशैली का तरीका है।

आश्रम में साफ-सफाई, रसोईघर में कर्मयोग आदि भी बहुत आनन्ददायक रहा, क्योंकि हम सभी एक साथ काम कर रहे थे। मुझे आश्रम के सभी संन्यासियों, विद्यार्थियों और अतिथियों, विशेषकर छोटे बच्चों को बड़े आनन्द और समर्पण के साथ सेवा करते देख बहुत अच्छा लगा। हमारा यह पहला प्रवास तो छोटा रहा पर मैं भविष्य में लम्बी अवधि के लिए आकर यहाँ के प्रशिक्षण सत्रों में भाग लेना चाहूँगी।

– रुक्मिणी पटेल

यहाँ आने से सर्वप्रथम मुझे मानसिक शांति मिली, जो मुझे घर में तनाव के कारण नहीं मिल पाती। मैं ऐसा ही सरलता और सादगी भरा जीवन चाहती

हूँ जो घर में व्यस्तता, काम, तनाव और चिंता के कारण नहीं हो पाता। हमने यहाँ जो कर्मयोग और सफाई का काम किया, उसमें बहुत अच्छा लगा। मुझे लगता है कि मैंने यहाँ जो किया और सीखा, वह अपने बच्चों को सिखाऊँ। यहाँ एक ऐसी ऊर्जा को महसूस किया जिसने मुझे थकान महसूस ही नहीं होने दी। यहाँ मोबाइल को जो बंद रखवाया गया, वह मुझे बहुत अच्छा लगा जिससे यहाँ हर काम और गतिविधि में मन लगा। यह नियम मैं अपने घर पर भी कुछ घण्टों के लिए लागू करना चाहूँगी। मैं कुछ महीनों से घर की निजी समस्याओं से बहुत तनाव में थी, यहाँ ऐसी शांति मिली कि जैसे लगता है कि जिन्दगी में कोई परेशानी ही नहीं है।

– जया साहू

आश्रम प्रवास के दिन मेरे जीवन के बहुमूल्य उपयोगी दिनों में गिने जायेंगे। आश्रम में कर्मयोग ने मेरे अन्तर्निहित अहंकार को हटाने का कार्य किया, राजयोग ने मेरे विचारों को एक नयी दिशा दी, भक्तियोग से मेरे भावनात्मक दृष्टिकोण में परिवर्तन हुआ, शरीर के स्वास्थ्य के लिए हठयोग के आसनों को सही तरीके से करना सीखा और ज्ञानयोग के माध्यम से अपने व्यक्तित्व के विकास के नये आयामों को समझा। इस प्रकार अपने लक्ष्य की प्राप्ति के लिए एक कला, एक विद्या सीखकर जा रहा हूँ।

– योगेश कुमार साहू

यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे बिहार योग विद्यालय आने का मौका मिला। आश्रम पहुँचते ही अलौकिक शान्ति का अनुभव हुआ। यहाँ के वातावरण में

जो शान्ति और सुख है, उसे शब्दों में उतार पाना असंभव है, फिर भी अपने अनुभव को लिखने का प्रयास कर रही हूँ। आश्रम का भोजन सात्त्विक और स्वादिष्ट था। सुबह के समय सूक्ष्म व्यायाम का जो अभ्यास होता था, उससे शरीर के सभी अंग प्रभावित होते थे। योगनिद्रा इतना प्रभावशाली था कि जब अपने इष्ट को ध्यान में लाने के लिए कहा गया तो निद्रा में भी आंखों में आँसू आ गये। यह मेरे जीवन का अलग ही अनुभव था। कर्मयोग की तो जितनी भी प्रशंसा की जाए, कम है। जहाँ समाज में लोग कर्मकरों पर निर्भर रहते हैं, यहाँ लगा जैसे यह हमारा परिवार है और हम सभी काम को मिल-जुलकर पूरा कर रहे हैं। सभी के हाथों में घड़ी देखकर हमें समय की पाबन्दी की सीख मिली। और क्या लिखूँ, इस आश्रम की जितनी भी प्रशंसा करूँ कम है।

– धानेश्वरी शर्मा

जब मुझे अपने कॉलेज द्वारा सूचना मिली कि हमें मुंगेर आश्रम जाना है तो मैं यहाँ घूमने-फिरने का सोचकर आयी थी। पर जब आश्रम आयी, यहाँ के संन्यासियों से मिली तो मेरी सोच बदली। यहाँ लोगों को सेवा करते देखा तो कर्मयोग के प्रति मेरी भावना भी बदल गयी। छोटे-छोटे बच्चों को सेवा करते देखा तो मन प्रफुल्लित हो गया। यहाँ के वातावरण से मन को बहुत शांति मिली। अगर हम यहाँ की दिनचर्या को हमेशा के लिए अपना लें तो हर काम सही समय पर होगा, और जो काम हम कल के लिए छोड़ देते हैं, उसके लिए भी हमें समय मिलेगा। यह दिनचर्या अपनाने से हमारी पूरी जिन्दगी बदल जायेगी।

– धारणा साहू

आश्रम आना मेरे लिए एक चमत्कार साबित हुआ। योग की छात्रा होने के बावजूद मेरा समय निर्धारित नहीं है। मैं सबेरे काफी देर से उठती हूँ और देर रात तक मोबाइल चलाती हूँ। पर आश्रम के सारे नियमों का पालन करके मैं बहुत खुश हूँ। ऐसा लगता है कि यहीं कुछ दिन और बिताती तो ज्यादा परिवर्तन देखने को मिलता। शहरों में सिर्फ गाड़ियों की आवाज में पर्यावरण की खूबसूरती दब-सी गयी है, यहाँ पक्षियों की चहचहाहट और ताजी हवा से अत्यधिक आनन्द की प्राप्ति हुई। वैसे तो मुझे आश्रम की सारी चीजें बहुत अच्छी लगीं, पर एक चीज जिसमें सबसे ज्यादा आनन्द आया, वह थी योगनिद्रा!

– प्रज्ञा परगनिहा

दान सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण सूचना

आश्रम के लिए दान राशि केवल निम्नलिखित श्रेणियों के अन्तर्गत स्वीकार की जाएगी –

1. **सामान्य दान**
   जो बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन को दिया जा सकता है और जिसका उपयोग यौगिक गतिविधियों के विकास एवं संवर्द्धन के लिए किया जाएगा।

2. **मूलधन निधि के लिए दान**
   बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट अथवा योग रिसर्च फाउण्डेशन की मूलधन निधि के लिए। **मूलधन निधि** से प्राप्त ब्याज राशि का उपयोग संस्था/न्यास की सभी गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

3. **सी.एस.आर. दान**
   जिसका उपयोग सी.एस.आर. गतिविधियों के लिए किया जाएगा।

इसलिए भक्तों से निवेदन है कि वे केवल उपर्युक्त श्रेणियों के अन्तर्गत अपनी दान राशि भेजें।

बिहार स्कूल ऑफ योग को दान किसी भी निम्नलिखित लिंक पर क्लिक करके दिया जा सकता है।

SB Collect Online **HDFC Online**

आप चेक, डी.डी. अथवा ई.एम.ओ. द्वारा भी दान दे सकते हैं जो **बिहार स्कूल ऑफ योग, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट** या **योग रिसर्च फाउण्डेशन** के नाम से हो और मुंगेर में देय हो।

दान राशि के साथ एक पत्र संलग्न रहे जिसमें आपके दान का प्रयोजन, डाक पता, फोन नम्बर, ई-मेल और PAN नम्बर स्पष्ट हों।

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट

योग चक्र 10

यौगिक जीवनशैली

स्वामी निरंजनानन्द सरस्वती

पृष्ठ 58, ISBN: 978-93-48677-42-6

17 से 21 दिसंबर 2019 तक स्वामी निरंजनानंद सरस्वती ने गंगा दर्शन विश्व योगपीठ में पाँचवाँ योग चक्र कार्यक्रम संचालित किया। इस दौरान स्वामीजी ने सभी निष्ठावान् साधकों के लिए योगाभ्यास से यौगिक जीवनशैली की ओर बढ़ने की आवश्यकता पर बल दिया। स्वामीजी ने दो अहम परिभाषाएँ दीं – जीवन वह है जो आप अपने मन के माध्यम से जीते हैं, और जीवनशैली आपके मन की गुणवत्ता की अभिव्यक्ति है।

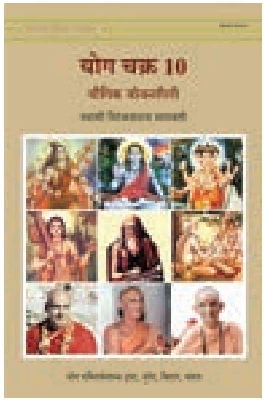

नया प्रकाशन

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें –

योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट, गरुड विष्णु, पी.ओ. गंगा दर्शन, फोर्ट, मुंगेर, बिहार 811201

दूरभाष : 9162783904, 9835892831 या **www.satyamyogaprasad.net** वेबसाइट देखें।

जवाब के लिए अपना पता लिखा, डाकटिकट लगा लिफाफा भेजें, अन्यथा आपके आवेदन पर विचार नहीं किया जाएगा

वेबसाइट और एप्प

www.biharyoga.net

बिहार योग पद्धति की मुख्य वेबसाइट पर बिहार योग, बिहार योग विद्यालय, बिहार योग भारती, योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट तथा योग शोध संस्थान संबंधी जानकारियाँ उपलब्ध हैं।

सत्यम् योग प्रसाद

बिहार योग परम्परा के समस्त ऑडियो, वीडियो तथा पुस्तक प्रकाशन प्रसाद रूप में *satyamyogaprasad.net* वेबसाइट पर उपलब्ध हैं जिन्हें इस QR code को स्कैन करके देखा जा सकता है। ये *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

यौगिक जीवनशैली साधना

स्वस्थ जीवन हेतु रचित यह कार्यक्रम *biharyoga.net* तथा *satyamyogaprasad.net* पर उपलब्ध है।

योगा एवं योगविद्या ऑनलाइन

www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yoga-magazines/
www.biharyoga.net/bihar-school-of-yoga/yogavidya/

योगा एवं योगविद्या पत्रिकाएँ *Android* एवं *iOS* उपकरणों पर एप्प के रूप में भी उपलब्ध हैं।

अन्य एप्प (Android एवं iOS उपकरणों के लिए)

- योग पब्लिकेशन्स ट्रस्ट की लोकप्रिय पुस्तक, ए.पी.एम.बी. अब सुविधाजनक एप्प के रूप में उपलब्ध है
- *Bihar Yoga* एप्प साधकों के लिए प्राचीन और नवीन यौगिक ज्ञान आधुनिक ढंग से पहुँचाता है
- *For Frontline Heroes* एप्प कोरोनावायरस के विरुद्ध अभियान में संघर्षरत कार्यकर्ताओं के लिए सरल योग अभ्यास प्रस्तुत करता है जो महामारी से उत्पन्न तनाव को सम्हालने में सहायक हैं

• Registered with the Registrar of Newspapers, India
Under No. BIHHIN/2002/6306

ISSN 0972-5725

योगपीठ कार्यक्रम एवं योग विद्या प्रशिक्षण 2026

योगपीठ कार्यक्रम

मई 6	*मुंगेर आगमन*
नवम्बर 19–22	*पद्म जयन्ती – योगनिद्रा संगोष्ठी*
दिसम्बर 27–31	*पद्म जयन्ती – यौगिक जीवनशैली महोत्सव*
प्रत्येक शनिवार	*महामृत्युंजय हवन*
प्रत्येक 4, 5 एवं 6 तारीख	*गुरु भक्ति योग*

बिहार योग विद्यालय योगविद्या प्रशिक्षण

फरवरी 1–अप्रैल 30	*संन्यास अनुभव (अन्तरराष्ट्रीय साधकों के लिए)*
अप्रैल 4–10	*धारणा प्रशिक्षण (अंग्रेजी)*
सितम्बर 28–अक्टूबर 6	*हठ योग एवं कर्म योग प्रशिक्षण*
अक्टूबर 11–19	*राज योग एवं भक्ति योग प्रशिक्षण*
अक्टूबर 25–नवम्बर 2	*क्रिया योग एवं तत्त्व शुद्धि प्रशिक्षण*
अक्टूबर 2026–अक्टूबर 2027	*संन्यास जीवनशैली अनुभव (अन्तरराष्ट्रीय साधकों के लिए)*

बिहार योग भारती योगविद्या प्रशिक्षण

मार्च–अप्रैल	*द्विमासिक यौगिक अध्ययन (हिन्दी)*
अप्रैल 1–30	*पारम्परिक योग प्रशिक्षण (अंग्रेजी)*
नवम्बर–दिसम्बर	*द्विमासिक यौगिक अध्ययन (अंग्रेजी)*

अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए तथा योगविद्या पत्रिका को ऑनलाइन देखने के लिए बिहार योग की वेबसाइट – biharyoga.net पर जायें या बगल के QR code को स्कैन करें